शुक्रवार,
१ अगस्त, १९५२

सत्यमेव जयते

संसदीय वाद विवाद

1st

लोक सभा

पहला सत्र

शासकीय वृत्तान्त

(हिन्दी संस्करण)

भाग २—प्रश्न और उत्तर से पृथक् कार्यवाही

लोक सभा

शुक्रवार, १ अगस्त, १९५२

सदन की बैठक साढ़े आठ बजे समवेत हुई

[**अध्यक्ष महोदय** अध्यक्ष-पद पर आसीन थे]

प्रश्न और उत्तर

(**प्रश्न नहीं थे : भाग १ प्रकाशित नहीं हुआ**)

अग्रिम सौदे (विनियमन) सम्बंधी विधेयक

वाणिज्य तथा उद्योग मंत्री (श्री टी० टी० कृष्णमाचारी) : मैं प्रस्ताव करता हूं कि एक विधेयक को पुरःस्थापित करने की अनुमति दी जाये जिसमें अग्रिम सौदों से सम्बन्धित कुछ मामलों को नियमित करने, माल के सम्बन्ध में विकल्प का प्रतिषेध करने तथा उस से सम्बन्धित मामलों की व्यवस्था की गई है ।

अध्यक्ष महोदय द्वारा प्रस्ताव प्रस्तुत किया गया और सदन द्वारा स्वीकृत किया गया ।

श्री टी० टी० कृष्णमाचारी : मैं विधेयक को पुरःस्थापित करता हूं ।

निवारक निरोध (द्वितीय संशोधन) विधेयक

गृह कार्य तथा राज्य मंत्री (डा० काटजू): मैं प्रस्ताव करता हूं :

"कि निवारक निरोध अधिनियम, १९५० में अग्रेतर संशोधन करने वाले विधेयक पर, संयुक्त समिति द्वारा प्रतिवेदित रूप में, विचार किया जाये ।"

सदन ने देखा होगा कि रिपोर्ट के साथ बहुत सारी असहमति टिप्पणियां लगाई गई हैं । प्रवर समिति के बारे में यह कुछ विचित्र सा अनुभव है । साधारण तौर से नियम यही है कि जब कोई विधेयक प्रवर समिति को सौंपा जाता है तो ऐसा समझा जाता है कि सदन विधेयक के सिद्धान्त से सहमत है, केवल उसके विवरणात्मक मामलों की ही छान-बीन की जानी है । इस विशेष मामले में उन माननीय सदस्यों ने, जो समिति के सदस्य बने, इस सदन में यह कहा कि वे इस विधेयक के बिल्कुल विरुद्ध हैं, उसके सिद्धान्त से भी सहमत नहीं हैं । अतः उनके सन्तुष्ट न होने पर किसी को कोई आश्चर्य नहीं हुआ होगा और न ही हो सकता है ।

अध्यक्ष महोदय : मैं एक बात साफ कर देना चाहता हूं । विधेयक के प्रवर-समिति को सौंपे जाने से सम्बन्धित प्रस्ताव पर विचार होते समय इस ओर ध्यान दिलाया गया था कि कुछ सदस्य अपने आपको इस विषय में बाध्य नहीं समझते हैं और वे इस विधेयक के सिद्धान्त पर ही पूर्ण रूप से सहमत नहीं हैं । मैंने उस समय बताया था कि भले ही कुछ सदस्य सहमत न हों परन्तु जहां तक सदन का सम्बन्ध है प्रस्ताव के स्वीकृत हो जाने पर, सारे सदन की विधेयक का सिद्धान्त मानना होगा और उस सिद्धान्त पर फिर से बहस शुरू करने का कोई प्रश्न खड़ा नहीं

[अध्यक्ष महोदय]

होगा। इस विशेष मामले में अंतर केवल यही है कि सदन ने प्रवर समिति को संशोधन विधेयक के खंडों पर ही विचार करने का अधिकार नहीं दिया अपितु उसे मूल अधिनियम को सारी धाराओं की भी छान-बीन करने का अनुदेश दिया था। इसका यह अर्थ नहीं कि अधिनियम के सिद्धान्त पर भी आज बहस की जा सकती है।

डा० काटजू : श्रीमान्, मैं और सारा सदन इस विषय को स्पष्ट करने के लिए आपका आभारी है। मैं तो केवल यही कहने जा रहा था कि जो माननीय सदस्य उस आधार विशेष पर प्रवर समिति में गये, वे संतुष्ट नहीं हो सकते थे चाहे कितनी ही रियायतें क्यों न कर दी जातीं। वे खुले तौर पर कहते थे कि वे विधेयक का विरोध करते हैं और वे विधेयक में सुधार करने के लिए नहीं गये हैं वरन् उसको प्रभावहीन बनाने के लिए गये हैं।

श्री एन० सी० चटर्जी (हुगली): श्रीमान्, हम इन बातों का विरोध करते हैं। प्रवर-समिति के सारे सदस्यों का रवैया ऐसा नहीं था। यह बात हमारे लिए कहना उचित नहीं।

अध्यक्ष महोदय : उन्होंने यह बात कुछ सदस्यों के लिए कही है।

श्री एन० के० गोपालन (कन्नानूर) : मेरा भी यही कहना है कि यद्यपि हमने विधेयक का सदन म विरोध किया था परन्तु प्रवर-समिति में हम उसमें कुछ सुधार और संशोधन करने के विचार से शामिल हुए थे। हमारा खास संशोधन यह था यदि निवारक-निरोध को प्रयोग में लाया जाये तो ऐसा केवल संकट स्थिति में ही हो। हमने जो भी संशोधन रखे, विधेयक म सुधार करने के विचार से रखे थे, सारे विधेयक को अलग हटा देने के विचार से नहीं।

डा० काटजू : मैं केवल एक बात कहना चाहता हूं जिससे मुझे फिर वही बात बार २ दोहरानी न पड़े। यदि किसी भी माननीय सदस्य ने बीच में बाधा डाली तो मैं यह समझूंगा कि जो चीज़ मैं कह रहा हूं वह उनके बारे में ही ठीक उतरती है।

अध्यक्ष महोदय : बात को ज़्यादा न बढ़ाया जाये। यदि माननीय मंत्री इसी तरह से बातें कहेंगे तो दूसरी ओर से भी ऐसा ही उत्तर मिलेगा। मैं सदन से अपील करता हूं कि वह विधेयक के इतिहास में न जाकर उसके वर्तमान रूप पर विचार करे।

डा० काटजू : श्रीमान्, आपने जैसा कहा अब मैं सीधे विधेयक की मुख्य बातों पर ही आता हूं।

सबसे महत्वपूर्ण बात जिस पर मतभेद रहा है वह विधेयक की अवधि के सम्बन्ध में है। विधेयक में, जैसा कि मैंने उसे मूलरूप में प्रस्तावित किया था, यह उपबन्ध था कि यह दो वर्ष तक यानी १९५४ तक लागू रहे। मैं इसे १ अक्टूबर १९५४ कर सकता था परंतु इस विधेयक के लिए सदन का सत्र अगस्त सितम्बर में फिर बुलाना बहुत असुविधाजनक होगा। इसलिए हमने इसमें ३१ दिसम्बर १९५४ ही रखा है।

तो, प्रवर समिति में भिन्न भिन्न प्रकार के संशोधन आये। एक मत यह भी था कि विधेयक की अवधि केवल तीन महीने ही रखी जाये यानी ३० सितम्बर से ३१ दिसम्बर १९५२ तक रखी जाये। दूसरी ओर ऐसे संशोधन भी थे कि अवधि को १९५५, १९५६ १९५७ तक बढ़ा दिया जाये, यहां तक कि १९५८ तक बढ़ाने का भी एक सुझाव था। बहुत सोच विचार के बाद प्रवर समिति ने

सोचा कि विधेयक जैसा बनाया गया है, उसे वैसा ही रहने दिया जाय। मैं सदन से कहूंगा कि प्रवर समिति ने यह निश्चय ठीक ही किया है।

मैं विधयक के सिद्धान्तों की चर्चा करके पुनः सारी बातों में न जाऊंगा परन्तु मैं सदन से यह अवश्य कहूंगा कि वह विश्व की स्थिति को, भारत के अन्दर और उसके बाहर की स्थिति को अच्छी तरह देख और समझे। हमारे चारों ओर की स्थिति खतरे से भरी हुई है! मैं फिर से यह कहूंगा कि इस विधेयक को एक वर्ष तक बढ़ाने या दो वर्ष तक बढ़ान का इस स्थिति पर कोई विशेष प्रभाव नहीं पड़ता। जहां तक मैं देखता हूं, हम यह आशा नहीं रखते कि अगले दो वर्षों में विश्व की या भारत की स्थिति में कोई विशेष परिवर्तन हो जायेगा। सदन इस बात को सदा ध्यान में रखेगा यह अधिनियम एक अवैकल्पिक या अनिवार्य अधिनियम नहीं है। यानी ऐसा नहीं है कि चाहे स्थिति ठीक हो या बुरी इस अधिनियम का पालन करना ही होगा। आज भी कई ऐसे राज्य हैं जहां एक भी व्यक्ति निरुद्ध नहीं है! हम यह आशा करते हैं कि धीरे धीरे स्थिति में सुधार होगा; स्थिति के सुधर जान पर इस बात से राज्य सरकारों एवं केन्द्रीय सरकार से अधिक और कोई प्रसन्न नहीं होगा कि यह अधिनियम वैसे भले ही लागू रहे परन्तु इसका अगले दो वर्षों में कोई काम न पड़े। परन्तु हमें वास्तविक स्थिति को ध्यान में रखना होगा; यद्यपि कुछ परिस्थितियों के कारण स्थिति में कुछ सुधार हुआ है, फिर भी हमारे चारों ओर काफी खतरे दिखाई दे रहे हैं। मैं यह कहने की स्थिति में नहीं हूं और न ही मैं यह कहना चाहता हूं कि सरकार को समय समय पर, लगभग प्रत्येक सप्ताह कैसी कैसी सूचनायें मिलती ह। हम इन्हें सुनकर चुपचाप नहीं बैठे रह सकते। मैं किसी की भावनाओं को चोट नहीं पहुंचाना चाहता। मैं सदन को विश्वास दिलाता हूं कि मैं यह सब बातें पूरी ज़िम्मेदारी के साथ कह रहा हूं। हम जानते हैं कि विभिन्न लोगों में किस किस तरह की विचारधारायें काम कर रही हैं और वे किन किन भावनाओं से प्रभावित हो रहे हैं। जैसा मैं कह चुका हूं यह अधिनियम किसी राजनैतिक दल का विरोध करन के लिए नहीं बनाया गया है। यह केवल एक ही चीज को ध्यान में रखकर बनाया गया ह यानी संविधानके अन्तर्गत जिन जिन बातों के लिए निवारक निरोध की अनुमति हो उनको सदा ध्यान में रखा जायगा।

प्रवर-समिति में एक सुझाव विधेयक के कार्यक्षत्र को कम करने का था। मैं किसी प्रकार का आरोप नहीं लगाना चाहता परन्तु सदन को शायद यह सुनकर आश्चर्य होगा कि संविधान के अन्तर्गत निवारक निरोध कई कार्यों के लिए काम लाया जा सकता है; इनमें से मुख्य यह हैं : सार्वजनिक शान्ति बनाये रखना, सारभूत प्रदायों का संरक्षण और विदेशी राष्ट्रों से मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध बनाए रखना। एक सुझाव यह था कि इन सब को हटाकर केवल दो कार्यों के लिए निवारक-निरोध होना चाहिए --एक तो राज्य की सुरक्षा के लिए और दूसरे भारत के बचाव के लिए। सार्वजनिक शान्ति बनाये रखने के लिये या समाज विरोधी कार्य वाहियों को रोकने के लिए अथवा सारभूत प्रदायों और सेवाओं के संरक्षण के लिये निवारक निरोध नहीं होना चाहिए। वे कहते थे कि, "हम यह सब नहीं चाहते।"

मैं यह नहीं कहूंगा कि उस विशेष संशोधन को किसने प्रस्तुत किया। जब संशोधन सामने आयेगा तो सदन को पता चल जायेगा। हमारी राय में तो यह कहना निरर्थक है कि हम निवारक निरोध अधिनियम के संविधि पुस्तक में रखना तो चाहते हैं परन्तु हम बहुत ज़रूरी

[डा० काटजू]

और आवश्यक बातों को उसमें से हटा देना चाहते हैं। खैर, प्रवर समिति इस निश्चय पर पहुंची कि दो वर्ष तक तो निवारक निरोध अधिनियम संविधान पुस्तक में रहना ही चाहिए। मेरा निवेदन है कि इसमें संसद् का बहुत सा समय लग जाता है। हमारा यह सदन यहां है ही और सरकार लोक सभा के प्रति उत्तरदायी भी है। संविधान में ऐसा दिया ही हुआ है और सदन के सारे सदस्यों को किसी भी समय एक संकल्प प्रस्तुत करने का अधिकार है कि सदन की राय में अधिनियम को निरसित कर दिया जाये। उस संकल्प के द्वारा वे छः महीने, १२ महीने या १८ महीने बाद अपना मत प्रकट कर सकते हैं। मैं समझता हूं यदि वे ऐसी राय प्रगट करें या विरोधी पक्ष संकल्प द्वारा इस मामले पर बहस करने की इच्छा प्रगट करें तो सदन की राय मालूम करने के लिए पूरी सुविधायें दी जायेंगी। परन्तु थोड़े थोड़े दिन बाद या हर साल इसी विषय पर बहस करना ठीक नहीं जंचता। इसलिए पहली बात दो वर्ष की है।

दूसरी बात, जिस पर विचार किया गया था, यह थी कि कार्यवाही आरम्भ करने का अधिकार किसको हो। केन्द्रीय सरकार को हो तो कोई आपत्ति नहीं, राज्य सरकार को हो तो कोई आपत्ति नहीं। सारा झगड़ा यह था कि ज़िलाधीशों और अतिरिक्त ज़िलाधीशों को——सारे अतिरिक्त जिलाधीशों को नहीं, केवल उन्हीं को जिन्हें राज्य सरकारों ने अधिकृत किया हो——कार्यवाही करने का अधिकार हो या न हो। ऐसा कहा गया था कि ज़िलाधीशों पर विश्वास नहीं किया जा सकता; उन्हें इतने सारे अधिकार नहीं दिये जाने चाहियें। एक ओर तो निवारक निरोध अधिनियम का उद्देश्य ही यह देखना है कि समाज विरोधी कार्यवाहियों को खत्म कर दिया जाये और सारभूत प्रदायों एवं आवश्यक सेवाओं के बनाये रखने में गड़बड़ न हो, दूसरी ओर इसमें देर करने के लिए कहा जाता है।

सदन को पता होना चाहिए कि हमारे ज़िलाधीश छोटे-मोटे अधिकारी नहीं हैं। मुझे उत्तर प्रदेश के बारे में अधिक पता है। वहां जनसंख्या ६२० लाख है जो ५२ ज़िलों में बंटी हुई है और वहां कुल ५२ ज़िलाधीश हैं। अतः औसतन हर एक ज़िलाधीश लगभग २० लाख की देखभाल करता है। वह अपने ज़िले के शासन का उत्तरदायी होता है और वहां पर सामान्य कानूनों को—जैसे दण्ड प्रक्रिया संहिता और अन्य प्रशासनिक क़ानूनों को लागू करने का काम भी उसी का होता है। किसी व्यक्ति द्वारा कोई अपराध किये जाने की शंका होने पर वह पुलिस सुपरिन्टेन्डेन्ट से उसे गिरफ्तार करने के लिए कह सकता है। वे और पहली श्रेणी के मजिस्ट्रेट भी——सभाओं आदि पर रोक लगा सकते हैं। इस तरह उनको कई अधिकार प्राप्त हैं। अब,यह सोचना कि एक ज़िलाधीश इस अधिनियम के अन्तर्गत ठीक तरह काम नहीं कर सकता और उस पर इस अधिनियम को लागू करने के बारे में विश्वास नहीं किया जा सकता गलत बात है——यह विचार भावुकता पर निर्भर है। मेरा निवेदन है कि हमारा अभिप्राय उन लोगों को और अधिक अधिकार देने का नहीं है परन्तु हम चाहते हैं कि अधिनियम के ठीक प्रकार से लागू होने में किसी क़िस्म की रुकावट या बाधा न हो। उदाहरण के लिए, उत्तर प्रदेश तक में ऐसे ज़िले हैं और उड़ीसा में भी हैं जहां कि मीलों तक संचरण का कोई साधन नहीं है। उड़ीसा में तो कहीं कहीं सड़कें भी नहीं हैं। राजस्थान में ही आप बीकानेर, जैसलमेर और अन्य सीमावर्ती क्षेत्रों को ले लीजिए। स्थिति चाहे जब बिगड़ सकती है। जोशीले भाषण दिये जा सकते हैं और लोगों को हिंसा-

त्मक कार्यवाहियां करने के लिए भड़काया जा सकता है। जिलाधीश को, यदि हम उसे उत्तरदायी बनाते हैं, वहां एकदम कार्यवाही करनी होती है।

जिस संशोधन का सुझाव दिया गया था उसके अनुसार ज़िलाधीश को स्वयं कुछ कदम उठाने के बजाय रिपोर्ट करने के लिए कहा गया है। और गृह मंत्री की योग्यता में, उसकी न्यायिक एवं प्रशासनिक योग्यता तथा निस्पक्षता में पूरा विश्वास प्रगट किया गया था। उस पर विश्वास प्रगट किया गया था कि वह बहुत उचित आदेश जारी करेगा। उसे एक प्रकार से बिल्कुल लार्ड चीफ़ जस्टिस समझा गया था। अतः उनका कहना था कि ज़िलाधीश को चाहिए कि गृह मंत्री को रिपोर्ट करे। स्थिति वहां कैसी भी हो, ज़िलाधीश को सारे मामले की रिपोर्ट करनी चाहिए और फिर प्रतीक्षा करनी चाहिए। गृह मंत्री बिचारा चाहे दौरे पर हो परन्तु उसके आदेशों की प्रतीक्षा की जानी चाहिए। वहां, दंगे और झगड़े होते रहें पर इससे कुछ नहीं, बिना मंत्री महोदय के आदेशों के कार्यवाही नहीं की जानी चाहिए। मैं कहता हूं कि प्रवर समिति की यह बात बिल्कुल ठीक थी कि ऐसी प्रक्रिया अपनाना अनुचित होगा।

मैं फिर से अतिरिक्त ज़िलाधीशों के बारे में कुछ कहना चाहता हूं। मुझे दूसरे राज्यों के बारे में पता नहीं, केवल उत्तर प्रदेश, बंगाल और उड़ीसा के बारे में मुझे ज्ञान है। हर जगह अतिरिक्त ज़िलाधीश एक वरिष्ठ अधिकारी होता है, मामूली मजिस्ट्रेट नहीं होता। जो जो काम उसे सौंपा जाता है उसमें उसे ज़िलाधीश के बराबर ही अधिकार होते हैं। इसके अलावा दूसरी सावधानी यह बरती गई है कि इन अधिकारों का प्रयोग वही अतिरिक्त ज़िलाधीश करेगा जिसे राज्य सरकार इस सिलसिले में चुनेगी या विशेष रूप से अधिकृत करेगी।

सदन को यह भी पता होगा कि बहुत से राज्यों में जैसे हैदराबाद में न्यायपालिका तथा कार्यपालिका सम्बन्धी कार्य पृथक् पृथक् अधिकारियों द्वारा किये जाते हैं। ज़िला मजिस्ट्रेट न्यायपालिका सम्बन्धी प्रशासन का प्रभारी होता है और जो व्यक्ति कार्यपालिका सम्बन्धी कार्य का प्रभारी होता है उसे कलक्टर कहते हैं। अन्य राज्यों में भी जहां न्यायपालिका और कार्यपालिका पृथक् पृथक् हैं, ज़िला मजिस्ट्रेट को केवल न्यायिक अधिकार ही हैं। इसलिए हमें इस बात को भी ध्यान में रखना होगा।

अब एक और महत्वपूर्ण संशोधन आता है। पहले, १९५१ के अधिनियम के अन्तर्गत यदि ज़िला मजिस्ट्रेट आदेश जारी करता था तो उसे राज्य सरकार को केवल सूचना देनी होती थी। उसे केवल राज्य सरकार की सूचना के लिए ही रिपोर्ट देनी होती थी। और यह राज्य सरकार की इच्छा पर था कि उसमें हस्तक्षेप करे या न करे। अधिकतर वह सोचती थी कि मंत्रणा परिषद् तो होगा ही, जैसे आदेश हैं, उन्हें ही चलने दो। अब हमने उसमें एक महत्वपूर्ण परिवर्तन कर दिया है। हमने विधेयक में यह परिवर्तन किया था और प्रवर समिति में हमने उसमें कुछ अदल बदल की है। जैसा कि विधेयक बनाया गया था उसके अनुसार ज़िला-मजिस्ट्रेट को यह अनुदेश दिया गया था कि वह राज्य सरकार को फौरन रिपोर्ट करे और साथ सारे सम्बन्धित कागजों को भेजे कि क्यों यह आदेश जारी किया गया। कागज़ों में निरोध के कारण भी दिये जाने ज़रूरी थे। और राज्य सरकार के लिए पन्द्रह दिन के अन्दर आदेश का स्पष्ट रूप से अनुमोदन करना ज़रूरी था। यहां पर गृह मंत्री आता है। इस पर आपत्ति उठाई गई कि शायद ज़िला-

[डा० काटजू]

मजिस्ट्रेट पूरी जानकारी न दे। विधेयक के अनुसार उसे वही क़ागज़ भेजने चाहियें जिसमें दिया गया हो कि आदेश क्यों जारी किया गया। प्रवर समिति में भी यह बात उठाई गई। अतः यह परिवर्तन किया गया है कि ज़िला मजिस्ट्रेट को, निरोध के कारणों के सहित सारे सम्बन्धित कागज़ात भेजने चाहिएं और मुझे विश्वास है कि यदि उस समय तक यानी पांच या सात दिन के अन्दर निरुद्ध व्यक्ति अपना अभ्यावेदन प्रस्तुत कर देता है तो मजिस्ट्रेट उसे भी भेज देगा।

इसके बाद समय अवधि का प्रश्न आया। किसी ने कहा यह तीन दिन होनी चाहिए किसी ने कहा पांच दिन। प्रवर समिति में मैंने यह कहा कि ज़िला मजिस्ट्रेट इसे फ़ौरन भेज देगा। वह पांच या सात दिन के अन्दर भेज देगा। परन्तु आपको राज्य सरकार को विचार करने के लिए समय देना होगा। उन्होंने कहा कि इस पर कोई भी, चाहे सचिव, या उप-सचिव या अवर सचिव विचार कर सकता है। मेरा निवेदन है कि जब 'राज्य-सरकार' शब्द कहे जाते हैं तो यह समझ लेना चाहिए कि वह मामला किसी मंत्री तक चाहे वह मुख्य मंत्री हो या गृह मंत्री—मैं ठीक-ठीक नहीं कह सकता क्योंकि विभिन्न राज्यों में मंत्रियों के नाम भिन्न भिन्न प्रकार से लिये जाते हैं—पहुंचता है और वहीं उसका निपटारा होता है। मुझे विश्वास है कि प्रत्येक राज्य सरकार इस बात को देखेगी और अनुदेशों द्वारा इसको करवायेगी कि जब कभी किसी ज़िलामजिस्ट्रेट से इस प्रकार का कोई मामला प्राप्त हो तो उसके द्वारा की गई सारी कार्यवाही पर केन्द्रीय सरकार द्वारा विचार होगा यानी उसकी ओर से किसी मंत्री द्वारा इसको निपटाया जायेगा, किसी सचिव या अपर सचिव द्वारा नहीं। समय अवधि कम कर दी गई मैं इस पर ज्यादा जोर नहीं दे रहा था। मैं उन माननीय सदस्यों के जिन्होंने यह दृष्टिकोण रखा था विचारों को दृष्टि में रखकर मान गया था कि अवधि १५ से घटा कर १२ दिन कर दी जाये। तो स्थिति यह हुई कि या तो १२ दिन के अन्दर आप आदेश को स्वीकृत करवा लें या फिर उस आदमी को छुट्टी हो जायेगी। मेरा निवेदन है कि इससे अधिक उचित रास्ता नहीं अपनाया जा सकता है। हमें क़ानून तोड़ने वालों के प्रति बहुत अधिक उदार नहीं बनाइये। बहस के दौरान में एक माननीय सदस्य ने उन लोगों का जिक्र किया जो सामने तो आते नहीं हैं पीछे से लोगों को भड़काते हैं, जलूस निकलवाते हैं और क़ानून भंग करवाते हैं। उनके विरुद्ध कुछ कार्यवाही होनी ही चाहिए। यदि ये लोग पांच या छः दिन वहां रहे तो इससे कोई नुक़सान नहीं होगा।

अब अगली बात लीजिए। विधेयक में कहा गया था कि ज्योंही राज्य सरकार ऐसा आदेश जारी करे या किसी ज़िला मजिस्ट्रेट के आदेश को मंजूर करे उसे उसकी एक रिपोर्ट भेजनी चाहिए। मैं सदन को याद दिलादूं कि ऐसा केवल केन्द्रीय सरकार के सूचनार्थ ही होगा क्योंकि मैं यह नहीं चाहता कि केन्द्रीय सरकार का इस मामले में अधिक भाग हो। शान्ति और व्यवस्था बनाये रखना, सारभूत प्रदायों में गड़बड़ न होने देने आदि की ज़िम्मेदारी राज्य सरकारों की है। मैं उसमें हस्तक्षेप करना नहीं चाहता हूं, न ही मैं चाहता हूं कि यहां एक बराबर का मंत्रणा पर्षद् स्थापित कर दिया जाये। आपको यह याद रखना चाहिए कि जब राज्य सरकार इन सारे आदेशों को केन्द्रीय सरकार के सूचनार्थ भेजेगी तो साथ साथ यह कागज़ात मंत्रणा परिषद् के पास भी भेजे जायेंगे। हम यह नहीं चाहते कि एक सामानान्तर पर्षद् स्थापित करके हम मंत्रणा पर्षद् के कार्य में बाधा डालें।

में बहुत असाधारण मामलों की बात नहीं कर रहा हूं। सामान्य प्रक्रिया यह है कि केन्द्रीय सरकार के पास क़ागज़ात केवल सूचना के लिए आते हैं ताकि उनके पास उनका अभिलेख रहे और सारे मामले के बारे में ठीक ठीक और अधिकृत सूचना रहे। अनुचित या अनधिकृत निरोध के प्रश्न पर चर्चा करते समय मैं यह भी कह दूं कि प्रत्येक राज्य की और यहां की सरकार विधान मंडलों में अपने बचाव के लिए सदा तैयार रहती है। सदस्य कई तरीक़ों से जानकारी प्राप्त कर सकते हैं, अल्प सूचना प्रश्न द्वारा, स्थगन प्रस्ताव द्वारा या दीर्घ सूचना प्रश्न द्वारा। जब कभी कोई व्यक्ति किसी ज़िला मजिस्ट्रेट या राज्य सरकार द्वारा नज़रबन्द किया जाये तो इस सदन के या राज्य विधान मंडल के प्रत्येक सदस्य को इस बारे में प्रश्न उठाने का अधिकार है। हर एक सरकार इस मामले में ज़रूरत से ज्यादा सावधान रहेगी कि जो आदेश जारी किया गया है वह उचित है या नहीं।

अध्यक्ष महोदय : मैं एक बात स्पष्ट कर दूं। हर एक मामले में इस सदन में प्रश्न या प्रस्ताव की अनुमति नहीं दी जा सकती। केवल राज्य के विधान मंडलों में इन प्रश्नों को उठाया जा सकता है। यहां उन मामलों को उठाया जा सकता है जिनके बारे में केन्द्रीय सरकार ने आदेश जारी किया हो।

डा० काटजू : मैं क्षमा चाहता हूं। जब मैंने लोक सभा कहा तो मैं राज्य विधान मंडलों को भी उसमें शामिल करना चाहता था—यहां के विधान मंडल को और राज्यों के विधान मंडलों को भी। यदि आदेश केन्द्रीय सरकार की ओर से हो, तो मामले को यहां उठाया जा सकता है। हर जगह राज्य विधान मंडल है और वह इस मामले के महत्व के प्रति पर्याप्त रूप से सावधान है।

अब हम मंत्रणा पर्षद् पर आते हैं। मूल अधिनियम में ऐसा उपबन्ध था कि मामला छः सप्ताह के अन्दर मंत्रणा पर्षद् के पास अवश्य जाना चाहिए। हम इस समय अवधि को कम करके जल्दी निबटारा करने के पक्ष में थे। वह अवधि ६ सप्ताह से ३० दिन हो गई है। इसके बाद मंत्रणा पर्षद् की रचना आती है। संविधान में ऐसा दिया गया है कि इसमें तीन श्रेणी के व्यक्ति लिये जा सकते हैं: या तो उच्च न्यायालय के न्यायाधीश या उच्च न्यायालयों के सेवा निवृत न्यायाधीश या वे व्यक्ति जो उच्च न्यायालयों के न्यायाधीश बनने के योग्य हों। तीसरी श्रेणी में दस वर्ष का अनुभव रखने वाले एडवोकेट रखे जा सकते हैं या वे न्यायाधीश रखे जा सकते हैं जो उच्च न्यायालय के न्यायाधीश बनने की योग्यतायें रखते हों। दो महीने हुए मैंने विभिन्न राज्यों के मंत्रणा पर्षदों के सदस्यों की एक सूची परिचालित की थी। आप देखेंगे कि बहुत से राज्यों में मंत्रणा पर्षद् में या तो सारे सदस्य उच्च न्यायालय के न्यायाधीश हैं या कम से कम एक तो है ही। कई राज्यों में दो न्यायाधीश हैं। कुछ छोटे राज्यों में ऐसे लोग हैं जो न्यायाधीश बनने की योग्यता रखते हैं। एक इच्छा प्रगट की गई थी कि उसमें एक वरिष्ठ व्यक्ति होना चाहिए और वह उच्च न्यायालय का न्यायाधीश होना चाहिए। हमने कहा बहुत अच्छा हम ऐसा परिवर्तन कर देंगे। प्रवर समिति ने सिफ़ारिश की है कि मंत्रणा पर्षद् का अध्यक्ष या तो उच्च न्यायालय का मौजूदा न्यायाधीश हो या वह व्यक्ति हो जो उच्च न्यायालय का न्यायाधीश रह चुका हो। मैं जिस बात को ध्यान में रख रहा था वह यह थी कि अध्यक्ष एक बहुत विद्वान और अनुभवी व्यक्ति हो। ऐसा व्यक्ति या तो उच्चन्यायालय का सेवानिवृत न्यायाधीश या सेवायुक्त न्यायाधीश हो सकता है।

[डा० काटजू]

मेरे विचार में सेवानिवृत हो जाने से ही उच्च न्यायालय का एक न्यायाधीश बाहरी दबाव में नहीं आने लगता या पक्षपात नहीं करने लगता। मैं जानता हूं कि उच्च न्यायालय का प्रत्येक न्यायाधीश सचाई एवं ईमानदारी का प्रतीक होता है। अतः यह संशोधन कर दिया गया है। शेष दो सदस्य, संविधान के अनुसार, या तो उच्च न्यायालय के सेवा-युक्त न्यायाधीश हो सकते हैं या सेवानिवृत्ति न्यायाधीश या वे व्यक्ति हो सकते हैं जो उच्च न्यायालय के न्यायाधीश बनने की योग्यता रखते हों।

इसके बाद, एक बात मैंने सोची कि हमारे यहां भाग 'ग' राज्य हैं जो बहुत छोटे छोटे हैं। वहां उच्च न्यायालय नहीं है, इसलिए वहां एक न्यायाधीश को अध्यक्ष बनाना बहुत कठिन होगा। अतः प्रवर-समिति ने सुझाव दिया है कि भाग 'ग' राज्यों के बारे में केन्द्रीय सरकार राज्य सरकारों से परामर्श करके मंत्रणा पर्षद् को इस प्रकार बनाये जिससे हर एक भाग 'ग' राज्य के हर एक मंत्रणा पर्षद् का अध्यक्ष पड़ौसी राज्य के उच्च न्यायालय का न्यायाधीश हो। यह बात प्रगट करती है कि हम मंत्रणा पर्षद् को एक पूर्णतः स्वतन्त्र एवं निष्पक्ष निकाय बनाने के लिए कितने उत्सुक हैं।

इसके बाद अवधि का प्रश्न आता है और यह बात आती है कि मंत्रणा पर्षद् के सामने क्या चीज़ आये। सदन को स्मरण होगा कि १९५० से, जब पहला अधिनियम लागू हुआ था, मंत्रणा पर्षद् के सामने मामला उस समय आता था जब लोगों के ख़िलाफ़ समाज विरोधी कार्यवाहियों जैसे माल इकट्ठा करके लाभ लूटने, चोरबाज़ारी करने, या संचरण-साधनों और सारभूत प्रदायों मे गड़-बड़ डालने के लिए आदेश जारी किये जाते थे। जब सार्वजनिक शान्ति को खतरा होता था तथा मंत्रणा पर्षद् के सामने मामला नहीं आता था। गत वर्ष एक संशोधन किया गया और उसके अनुसार हर मामले को मंत्रणा पर्षद् के सामने भेजा जाना था। परंतु यह कहा गया कि मंत्रणा पर्षद् कागज़ पर ही मामले का फ़ैसला कर देगा; वह अगर चाहे तो विरुद्ध व्यक्ति को बुला सकता है। इस वर्ष हम अपने आप और आगे बढ़े और हमने कहा कि यदि निरुद्ध व्यक्ति चाहता है कि वह स्वयं मंत्रणा पर्षद् के सामने जा कर अपना हाल सुनाये तो उसे यह अधिकार होना चाहिए। मैं समझता हूं और मैंने यह सोचा कि यह बहुत बड़ा अधिकार है। प्रवर समिति में और यहां वादविवाद में इस पर बहुत कुछ बहस हुई और उन्होंने कहा कि एक वकील होना चाहिए और गवाहों को बुलाने का और उनसे जिरह करने का अधिकार होना चाहिए। मैं फिर से यह कहता हूं कि यदि इस प्रकार की बात रखी जायेगी तो कई कारणों से इससे अधिनियम का सारा महत्व नष्ट हो जायेगा। यदि आप ऐसा करते हैं तो फिर निरुद्ध व्यक्ति को उच्च न्यायालय के तीन न्यायाधीशों की सेवा का फ़ायदा क्यों उठाने दिया जाये। उसे एक अवैतनिक मजिस्ट्रेट के पास भेज दीजिये, वह गवाहों की जांच करेगा और उनसे जिरह करेगा। अपने मामले की तीन न्यायिक अधिकारियों द्वारा, जो देश के सबसे बड़े अधिकारी हैं, जांच करवाना एक काफ़ी बड़ा अधिकार है। परन्तु उन्होंने कहा, "नहीं, नहीं, हम चाहते हैं कि उनकी जांच हो और उनसे जिरह की जाये।"

अब आगे मैं जो बातें कहूंगा उससे शायद यहां के कुछ वकील सदस्यों को बुरा लगे। मैं स्वयं एक वकील हूं और मैंने बार बार यह कहा है कि वकालत

की सबसे अच्छी कला यह है कि जो वकील हो वह बन्दी के बिल्कुल पीछे चुप खड़ा रहे और मामले में ज़रा भी जिरह न करे। मैं यहां नियमों की, या क़ानूनों की या अमरीका, आस्ट्रेलिया, जर्मनी और इंग्लैण्ड आदि के क़ानून सम्बन्धी पूर्व दृष्टान्तों की चर्चा नहीं कर रहा हूं। हम लोग ऐसा न करके ग़लती कर रहे हैं हालांकि हमें इससे बहुत फ़ायदा होता है। ख़ैर, मैं तो सही बात कह रहा हूं। मेरा अनुभव यही रहा है। ज्योंही जज देखता है कि अभियुक्त के पास वाला वकील का स्थान ख़ाली है तो उससे सन्देह होने लगता है। मैंने स्वयं ऐसा देखा है। श्रीमान्, आपको स्मरण होगा कि दण्ड प्रक्रिया संहिता में एक धारा है जिसके अनुसार फ़ौज़दारी के मुक़दमे में हर एक सेशन जज को, चाहे उसके सामने कितने ही वकील क्यों न हों, अभियुक्त की व्यक्तिगत रूप से जांच करनी होती है और उसे उस से पूछना होता है कि जो गवाही उसके खिलाफ दी गई है वह ठीक है या नहीं। मेरे विचार में यह धारा ३४२ है। इसके अनुसार, इस्तगासे की गवाही के बाद न्यायाधीश महोदय के लिए अभियुक्त से यह पूछना जरूरी है कि, "अब तुम्हें क्या कहना है, तुम अपने को दोषी कहते हो या निर्दोष ? अमुक गवाह ने तुम्हारे खिलाफ़ ऐसा कहा है, तुम क्या कहते हो ?" इसमें बहुत से पृष्ठ भर जाते हैं। और हर एक उच्च न्यायालय के बहुत से निर्णय हैं जिसमें कहा गया है कि यदि यह जांच लापरवाही से की गई है तो सारे परीक्षण में गड़बड़ हो सकती है और फिर से जांच किये जाने का आदेश दिया जा सकता है या उस आधार पर अभियुक्त को छोड़ा भी जा सकता है। तो ऐसा उपबन्ध क्यों है ? इसलिए कि न्यायाधीश सोचता है और विधान निर्माता यह सोचते हैं कि हो सकता है कि न्यायाधीश अभियुक्त को, चाहे वह सारी बातों को मान रहा हो या न मान रहा हो, स्वयं देखना चाहे या उससे पूछताछ करना चाहे।

मैं यहां पुनः दोहराना चाहता हूं कि नज़रबन्द के हक़ में यह बुरा करना होगा कि उसे अपने वकील के साथ मंत्रणा पर्षद् के सामने जाने को कहा जाये —मैं यह मंत्री के रूप में नहीं वरन् एक वकील के रूप में पूरी ज़िम्मेदारी के साथ कह रहा हूं। यदि मंत्रणा पर्षद् में उसके छूटने की ५० प्रतिशत उम्मीद है तो वकील जाने पर वह ५ प्रतिशत रह जायेगी। यह बात आप बिल्कुल ठीक समझिए। क्योंकि आपको याद रखना चाहिए कि वहां तीन जज होते हैं, वहां न्यायालय का वातावरण नहीं होता। वकील को अपनी बात कहने के लिए अदालती वातावरण की आवश्यकता होती है। उसे तो बात बात में साक्ष्य अधिनियम चाहिए। उसकी आदत बार बार यह कहने की होती है, "मुझे इस प्रश्न पर आपत्ति है, यह बात संगत है और यह असंगत है।" फिर जिरह होती है और बड़े बड़े न्यायाधीशों को उद्धृत किया जाता है। ऐसी बातें होती हैं। परन्तु यहां केवल तीन न्यायाधीश बैठे होते हैं। यहां प्रचार का मौका नहीं होता। इसलिए बिचारे वकील की समझ में नहीं आ सकता कि क्या करना चाहिए। वह कह भी क्या सकता है। कोई उसकी बात पर ताली बजाने वाला नहीं और न ही कोई उसकी बात को अखबारों में देने वाला है। मैं कभी २ सोचता हूं कि यदि अदालतों में रिपोर्टरों को न आने दिया जाये तो वहां का काम कभी भी पीछे न पड़े; बल्कि मैं समझता हूं उसमें कमी ही हो सकती है। ख़ैर मैं इस बात पर और अधिक कुछ नहीं कहना चाहता।

अच्छा दूसरे, आप यह सोचिए कि निवारक निरोध का असली मतलब क्या है ? यह कोई एक खास घटना तो होती नहीं कि किसी ने कोई हत्या कर दी हो या कोई जाली

[डा० काडजू]

कागज़ बनाया हो जिसकी वजह से उसे गिरफ्तार किया गया हो। यह तो एक लम्बी चीज़ होती है। मैंने ऐसी फाइलें देखी हैं जिसमें नज़रबन्द के लिए लिखा गया है कि "तुमने अमुक तारीख़ को ऐसा भाषण दिया और फिर तुमने दूसरी तारीख़ को एक और भाषण दिया; तुम ऐसा कई महीनों से करते चले आ रहे हो। इससे हम यह निष्कर्ष निकालते हैं कि यदि तुम्हें निरुद्ध नहीं किया जाये तो इससे कई बातों को ख़तरा पहुंचेगा।" इस सारे मामले की छान-बीन के लिए साधारण बुद्धि के आदमी की आवश्यकता है, कोई जिरह की ज़रूरत नहीं। आप इसे भी याद रखें। इन तीन योग्य व्यक्तियों से बना मंत्रणा पर्षद् उस व्यक्ति से मिलता है और जैसा कि अधिनियम में दिया गया है, वह अभियुक्त की बात सुन सकता है और हर किसी से, यहां तक कि सरकार से भी जैसी सूचना मांगे, ले सकता है। इस प्रकार इकट्ठी की गई सामग्री से ही वे किसी नतीजे पर पहुंचते हैं। उनसे कोई बात छिपाई नहीं जा सकती। यह ठीक है कि राज्य सरकार नज़रबन्द से कुछ कागज़ात यह कह कर छिपा सकती है कि वे गोपनीय हैं और उनका महत्व इस प्रकार का है कि उन्हें दिखाया नहीं जा सकता परन्तु मंत्रणा पर्षद् से वह ऐसा नहीं कर सकती। किसी ने पूछा था कि यदि मंत्रणा पर्षद् की यह मांग पूरी न की जाये तो क्या होगा। मैंने कहा कि इसमें क्या है यदि मैं मंत्रणा पर्षद् का सदस्य होऊं तो मैं कहूंगा "मैं इस व्यक्ति को छोड़ रहा हूं क्योंकि आप मुझे पूरी सूचना नहीं दे रहे हैं, शायद ये सूचना नज़रबन्द के हक़ में हों।" सारा मामला वहीं ख़त्म हो जायेगा। इसलिए कोई भी सरकार मंत्रणा पर्षद् से कोई सूचना नहीं छिपा सकती। मंत्रणा पर्षद् को यह कहने का अधिकार है कि "हम अमक व्यक्ति से मिलना चाहते हैं गवाह के रूप में नहीं या उसने जिरह करने के लिए; हम उसे केवल देखना चाहते हैं।"

आम तौर पर ऐसा ख्याल है कि मंत्रणा पर्षद् नाम की चीज़ है, उससे कोई लाभ नहीं होता। हमने इस बारे में आंकड़े देखे हैं। जब सरदार पटेल का अधिनियम यानी पहला निवारक निरोध अधिनियम पास हुआ था तो मंत्रणा पर्षद् के पास मामले नहीं जाते थे परन्तु गत वर्ष जब पिछली संसद् ने इस अधिनियम में संशोधन किया तो मंत्रणा पर्षद् के पास बहुत सारे मामले लाये जाने लगे। २२ फरवरी १९५० से ३१ मई १९५१ के काल में मंत्रणा पर्षद् ने कुल ४४०० मामलों की जांच की और लगभग १२०० व्यक्तियों को छोड़ा यानी २८ प्रतिशत मामलों में लोगों को छोड़ा और ७२ प्रतिशत मामलों में निरोध के आदेश का पुष्टिकरण किया। इससे पता चलता है कि मंत्रणा पर्षद् एक न्यायालय के रूप में कार्य करता है और उसके पास फ़ैसले पर पहुंचने के लिए बहुत कुछ सामग्री होती है। यदि आप किसी अपील न्यायालय, जैसे उच्च-न्यायालय या डिस्ट्रिक्ट व सेशन्स न्यायालय के आंकड़े देखें तो आपको पता लगेगा कि सफल मामलों की संख्या अधिक नहीं होती —यह १५, २०, २८ या ३० प्रतिशत के लगभग होती है। इसी प्रकार, जब हम यहां देखते हैं कि अधिकतर मामलों में आदेशों की पुष्टि ही हुई है तो हम इस नतीजे पर पहुंचते हैं कि राज्य सरकारें और यहां तक कि ज़िला-मजिस्ट्रेट पूरी सावधानी से कार्य करते रहे हैं। २८ प्रतिशत मामलों में, पूरी सामग्री को देख कर शायद उन्होंने सोचा हो कि चूंकि अब यह व्यक्ति पांच छः सप्ताह से निरुद्ध हैं, इसलिए अब इसे छोड़ दिया जाना चाहिए या यह सोचा हो कि निरोध का आदेश जारी करने का कोई औचित्य न था। इसलिए मेरा निवेदन है कि मंत्रणा पर्षद् का काम बहुत महत्वपूर्ण काम है, इसके अध्यक्ष के बारे में

नियम और कड़े कर दिये गये हैं और इस विधेयक में इस बात की सावधानी रखी गई है कि पर्षद् के सामने मामले को ले जाने की अवधि को न्यूनतम किया जाये । इस प्रकार, मंत्रणा पर्षद् के पास कागज़ात ३० दिन के अन्दर चले जाने चाहिएं । पर्षद् भले ही उसमें दो महीने लगा दे; पहले वह केवल छः सप्ताह ले सकता था । हमने दो महीने इसलिए रखे हैं कि वह इस बीच पूरी तरह से जांच कर सकता है, और चाहे तो नज़रबन्द को दो या तीन बार बुला सकता है । अतः मैं आशा करता हूं कि मंत्रणा पर्षद् दो महीने के अन्दर किसी फ़ैसले पर पहुंच सकेगा और उस समय तक मामला अन्तिम रूप से तय हो जाया करेगा ।

इसके बाद निरोध की अवधि का प्रश्न आया । हमने प्रस्ताव किया कि मंत्रणा पर्षद् के आदेश के पुष्टिकरण की तिथि से लेकर अधिकतम अवधि एक वर्ष की रखी जाये । इस में बहुत से संशोधन रखे गये । कुछ ने कहा तीन महीने रखी जाये और कुछ ने कहा छः महीने । यह दूसरी बात है कि मंत्रणा पर्षद् कह दे कि आदेश तो उचित है, परन्तु अभियुक्त को तीन महीने बाद छोड़ दिया जाये । परन्तु विधेयक में एक वर्ष का उपबन्ध है । कृपया यह याद रखिए कि एक वर्ष केवल अधिकतम अवधि है । मंत्रणा पर्षद् के बाद मूल अधिनियम की धारा १३ आती है जिसके अनुसार केन्द्रीय तथा राज्य दोनों सरकारों को किसी भी अभियुक्त को छोड़ने का अधिकार है । गत छः महीने में राज्य सरकारों ने इसके अनुसार कार्य किया है और मेरा विचार है कि एक हज़ार से अधिक आदमियों को छोड़ा गया है । मैं सदन को विश्वास दिल सकता हूं कि हर एक नज़रबन्द मामले पर करीब-करीब लगातार पुनर्विचार होता रहा है । यह बात कुछ अजीब सी लगेगी यदि मैं यह कहूं कि राज्य सरकार अभियुक्तों को ज्यादा रखना नहीं चाहती क्योंकि उनका काफ़ी खर्चा होता है । बंगाल में, मैं समझता हूं, एक अभियुक्त पर तीन या चार रुपये प्रति दिन व्यय किये जाते हैं । एक तो राज्य सरकार का पैसा बहुत खर्च होता है दूसरे वह इस मुसीबत को मोल क्यों ले ? फिर विधान मंडलों के सदस्य, रिश्तेदार और मित्र मंत्री के पास जाते हैं और कहते हैं कि यह व्यक्ति निर्दोष है । इसके बाद धारा १४ है जिसके अनुसार नज़रबन्द को मौखिक शर्त पर छोड़ा जा सकता है । सैकड़ों व्यक्तियों को मौखिक शर्त पर छोड़ा जाता है । अतः निरोध की अधिकतम अवधि केवल अत्यधिक गम्भीर मामलों में ही लागू होगी; अन्य मामलों में नहीं ।

निरोध की अधिकतम अवधि के समाप्त होने के बाद मैं बता दूं कि हमने एक बहुत साहसपूर्ण क़दम उठाया है । हमारी बात से बहुत कम राज्य सरकारें ही खुश होंगी क्योंकि हमने उनसे कह दिया है कि "किसी व्यक्ति को नज़रबन्द करने की सामग्री उसके निरोध के साथ खत्म हो जाती है । उसको फिर से निरुद्ध करने के लिये नयी सामग्री चाहिये ।" मेरा विचार है सदन इस चीज़ के महत्व को समझेगा । जब यह कहा जाता है कि विधेयक में निवारक निरोध अधिनियम को दो वर्ष तक बढ़ाने की व्यवस्था है तो इसमें चिन्ता की कोई बात नहीं क्योंकि एक नज़रबन्द को १२ या १४ महीने से अधिक निरुद्ध नहीं किया जा सकता । भले ही यह क़ानून जारी रहे । उसे तो छोड़ ही दिया जायेगा ।

मैं सदन को विश्वास दिलाना चाहता हूं कि प्रत्येक नज़रबन्द के मामले पर विचार होता रहेगा । यदि ऐसी राय होगी तो हर तीन महीने या छः महीने के बाद उनके मामलों पर पुनर्विचार किया जायगा । कुछ सदस्यों की राय थी कि मामला फिर

[डा० काटजू]

मंत्रणा पर्षद के पास लाया जाये । परन्तु मैं पूछता हूं कि मंत्रणा पर्षद किस सामग्री पर फिर से जांच करेगा । नज़रबन्द जेल में रह चुका है, वह कहता है कि "मेरा आचरण बहुत अच्छा रहा है और मैं बहुत अच्छी तरह जेल में रहा हूं ।" परन्तु इन बातों का फ़ैसला करना और यह देखना कि राजनैतिक स्थिति कैसी है और क्या अमुक नज़रबन्द को छोड़ना ठीक है, राज्य सरकार और कार्यपालिका का काम है । मंत्रणा पर्षद से मामले की पुनः जांच करवाना, हमारी राय में उचित नहीं ।

एक सुझाव यह था कि परिवार के लिये भत्ते की व्यवस्था होनी चाहिये । यह मामला प्रत्येक राज्य सरकार की इच्छा से संबंधित है । बंगाल का मुझे पता है, वहां ज़रूरतमन्द लोगों को यह भत्ते दिये जाते हैं परन्तु यह चीज़ पूरी तरह से राज्य सरकारों की इच्छा पर होती है । मुझे भरोसा है कि जहां पर देखा जायेगा कि कोई परिवार वास्तव में कठिनाई में है वहां उचित आदेश जारी किये जायेंगे । इस बारे में मैं कोई नियम नहीं बना सकता और सदन से भी मैं यही निवेदन करूंगा कि वह अधिनियम में इसको शामिल न करें । कृपया आप यह याद रखें कि जहां हमें सब प्रकार के दंडित व्यक्तियों के साथ सहानुभूति नहीं है, इसी प्रकार अपराध आरोपित व्यक्तियों के साथ भी हमारी सहानुभूति नहीं है । मैंने अपराध-आरोपित व्यक्तियों को ८ या १० महीने तक देखा है । जहां तक इस निवारक कार्यवाही का संबंध है, या तो आप यह कहें कि सरकार अत्याचार कर रही है और इसलिये उसे चाहिये कि अभियुक्तों के आश्रितों के साथ यह सहानुभूति दिखायें या आप यह कहें कि जुर्म या अपराध रोकने के लिये ऐसा किया जाता है ; जो कुछ भी हो, हमें यह चीज़ राज्य सरकारों की इच्छा पर छोड़ देनी चाहिये ।

मेरे विचार में मैं विधेयक के सारे पहलुओं की चर्चा कर चुका हूं । मैं केवल एक बात का और ज़िक्र करूंगा । वह यह कि उन लोगों के बारे में नीति क्या हो जो पहले से निरूद्ध हों ? मैं सदन को स्पष्ट रूप से सारा हाल बताना चाहता हूं । गत तीन महीनों में सारी राज्य सरकारों द्वारा पुराने मामलों की फिर से जांच की गई थी और थोड़े से पुराने नज़रबन्द अभी तक हिरासत में हैं । इन लोगों के बारे में राज्य सरकारों ने पूर्ण गंभीरता से विचार किया है और वे इस नतीजे पर पहुंची हैं कि वे कुछ लोगों को छोड़ने की स्थिति में नहीं हैं । अतः इन लोगों को छोड़ने पर जोर देना राज्य सरकारों के साथ अनुचित व्यवहार करना होगा । तो, जहां तक इन पुराने मामलों का संबंध है, उपबन्ध यह है कि चाहे कैसी ही स्थिति हो इन लोगों को पहली अप्रैल १९५३ तक अवश्य छोड़ दिया जाना चाहिये । यदि किसी को हाल ही में नज़रबन्द किया हो—उदाहरण के लिये समझ लीजिये किसी को पहली फ़रवरी १९५२ को नज़रबन्द किया हो—तो उसके बारे में उपबन्ध यह है कि उसे निरोध आदेश जारी किये जाने के १२ महीने बाद छोड़ा जाय । तो स्थिति यह है कि जहां तक पुराने मामलों का संबंध है, अन्तिम तिथि पहली अप्रैल १९५३ है और नये मामलों के बारे में अवधि निरोध आदेश जारी होने के बाद १२ महीने है ।

तो यही सारा संशोधक विधेयक है । मैं समझता हूं कि इस समय यह एक आदर्श विधेयक के रूप में है, परन्तु मैं यह नहीं कह सकता कि इसमें समस्त संभव सुरक्षणों की व्यवस्था है । सुरक्षण नम्बर १ : यदि

ज़िला मजिस्ट्रेट हस्तक्षेप करे तो १२ दिन; सुरक्षण नम्बर २: राज्य सरकार; सुरक्षण नम्बर ३ : मंत्रणा पर्षद; सुरक्षण नम्बर ४: संबंधित व्यक्ति का स्वयं उपस्थित होन का अधिकार । मैं समझता हूं कि इस विधेयक में कोई कमी नहीं है ।

जहां तक निरोध की दशाओं का संबंध है, मैं इनकी चर्चा करना नही चाहता । मैं केवल अपना अनुभव बताना चाहता हूं । मैं मुर्शदाबाद गया जहां जेल में मेरे कुछ मित्र थे । मैंने उन से कहा कि मैं यह जानने नहीं आया हूं कि उन्हें किन कारणों से गिरफ्तार किया गया है ; मैं यह पूछने आया हूं कि उन्हें किसी चीज़ की जरूरत तो नहीं । मैंने देखा कि जहां वे लोग थे वह एक बहुत बड़ी बैरक थी—उसे देखकर मुझे अपना ज़माना याद आ गया । हर एक खाट पर मसहरी लगी थी—उनके लिये बहुत सी पुस्तकों का प्रबन्ध था ; चार नज़रबन्दों के बीच एक समाचारपत्र भी आ सकता था । वे लोग २०-२५ थे इसलिये उनके पास दस अख़बार आते थे ; इसके अलावा होल्डर, पेन्सिल सब चीज़ें थीं । तीन रुपये रोज़ का भत्ता भी दिया जाता था । ज्योंही कोई नज़रबन्द आता है उसे २४० रुपये कपड़े आदि बनवाने के लिये मिलते हैं । वहां किसी को जाने की अनुमति नहीं थी । उन्हें खेल कूद की सुविधायें भी थीं–बैडमिन्टन, वॉली ब ॉल आदि का प्रबन्ध था । रसोई के लिये १२ नौकर थे - डाक्टर की व्यवस्था थी—सब चीज़ों का प्रबन्ध था—मैं समझता हूं [बंगाल के २ करोड़ लोगों को सु विधायें प्राप्त नहीं हैं जो इन्हें हैं । तो यह हैं उनको कही जाने वाली कठिनाइयां । चिट्ठी लिखने और लोगों से भेंट करने आदि की स्वतंत्रता उन्हें प्राप्त थी । निस्सन्देह मैंने नीति के संबंध में उनसे चर्चा नहीं की लेकिन वे सब खुश नज़र आते थे ।

मैं सदन से इस विधेयक को पारित करने की सिफ़ारिश करता हूं ।

अध्यक्ष महोदय : प्रस्ताव प्रस्तुत हुआ:

" कि निवारक निरोध अधिनियम, १९५० में अग्रेतर संशोधन करने वाले विधेयक पर, संयुक्त समिति द्वारा प्रतिवेदित रूप में, विचार किया जाये । "

इससे पहले कि हम विधेयक पर अग्रेतर चर्चा करें मैं चाहता हूं कि विधेयक को लोक मत ज्ञात करने के लिये परिचालित करने तथा उसे उसी समिति को फिर से भेजने से संबंधित संशोधनों को निपटा दिया जाये । मैं अपना निर्णय अभी देना नहीं चाहता मैं चाहता हूं कि उन माननीय सदस्यों को, जिन्होंने संशोधन रखे हैं, इस बात का उत्तर देने का अवसर दिया जाये कि उनके संशोधनों को क्यों न अनियमित ठहराया जाये । इस बारे में मैं पिछले विनिर्देशों की ओर ध्यान दिलाता हूं । एक विनिर्देश में कहा गया है कि यह देखना अध्यक्ष का कर्तव्य है कि सदन में कोई विलम्बकारी प्रस्ताव न रखा जाये ; यह बात दूसरी है कि ऐसे प्रस्ताव उस समय आवश्यक हो जाते हैं जब या तो प्रवर समिति ने विधेयक पर ठ.क तरह से विचार न किया हो या प्रवर समिति से विधेयक के आने के बाद कोई नई परिस्थितियां पैदा हो गई हों ।

तो जहां तक इस विधेयक का संबंध है, कोई नई परिस्थितियां पैदा नहीं हुई हैं क्योंकि विधेयक प्रवर समिति से आते ही सदन के समक्ष आ गया है । दूसरा प्रश्न है कि क्या प्रवर समिति में इस पर ठीक तरह से विचार नहीं हुआ है ? मैं समझता हूं कि संयुक्त समिति ने विचार करने के लिये काफ़ी समय लिया था । सदन ने समिति को अनुदेश दिया था कि वह सब धाराओं के बारे में संशोधन लेना स्वीकार करें ।

[अध्यक्ष महोदय]

अब भी माननीय सदस्यों को अपने संशोधन प्रस्तुत करने का मौक़ा मिलेगा । अतः मैं संशोधन रखने वाले सदस्यों से जानना चाहता हूं कि वे इस बारे में क्या कहना चाहते हैं । श्री वल्लातरास ।

श्री वल्लातरास (पुदुकोटै) : मैंने अपना संशोधन यह बताने के लिये रखा था कि अधिकारी गण किस प्रकार निरोध-आदेश का दुरूपयोग करते हैं या किस प्रकार लोगों को गिरफ्तार करवाते हैं । कई मामलों में देखा गया है कि लोगों को जबरदस्ती, बिना किसी अपराध के पकड़ा गया है; बाद में सरकार या मंत्रणा पर्षद ने उन्हें छोड़ा । इन बुराइयों को रोकने का विधेयक में कोई उपबन्ध नहीं है ।

अध्यक्ष महोदय : प्रश्न तो यह है कि क्या प्रवर समिति ने अनुचित रूप से इस विधेयक पर विचार किया है जिससे उसे फिर वहीं भेजा जाये । आप जो कह रहे हैं वो दूसरी चीज़ है; आपका मतलब यह है कि प्रवर समिति ने कुछ ऐसे विषयों पर विचार नहीं किया जिन पर आप उससे विचार करवाना चाहते थे । यह तो अपनी अपनी राय का सवाल है । जब विधेयक पर चर्चा हो रही थी तो प्रवर समिति के भी बहुत से सदस्य यहां मौजूद थे और उन्होंने सारे वाद-विषयों पर चर्चा में भाग लिया था ।

श्री वैलायुधन (क्विलोन व मावेलिक्करा रक्षित-अनुसूचित जातियां) : मुझे केवल यह कहना है कि निवारक निरोध के बारे में कुछ नई चीज़ें खड़ी हो गई हैं । मेरे राज्य में गत सप्ताह लगभग २०० आदमी पकड़े गये जिसमें से अधिकतर इस निवारक निरोध क़ानून के अधीन पकड़े गये ।

अध्यक्ष महोदय : प्रवर समिति की रिपोर्ट के बाद ?

श्री वैलायुधन : यह तो मुझे ठीक नहीं पता लेकिन शायद प्रवर समिति के द्वारा विचार किये जाने के समय में ऐसा हुआ है ।

डा० काटजू : मैं अधिकारियों के व्यवहार के बारे में कुछ बताना चाहता हूं । प्रवर समिति में इस पर चर्चा हुई थी और वह इस नतीजे पर पहुंची थी कि अधिनियम की धारा १५ उसी अधिकारी का बचाव करती है जो ईमानदारी से और बिना किसी द्वेष पूर्ण भावना से कार्य करता हो । जो द्वेषभरी भावना से कार्य करता हो, उसको सज़ा दी जा सकती है ।

श्री शेषगिरि राव (नंदयाल) : प्रवर समिति ने यह उपबन्ध तो कर दिया है कि पांच दिन के अन्दर नज़रबन्द को अन्दर गिरफ्तारी के कारण बतायें जाये । परन्तु संविधान के अन्तर्गत उसे एक और अधिकार है--यानी अभ्यावेदन करने का अधिकार । इस पर विचार नहीं किया गया है ।

अध्यक्ष महोदय : मेरे विचार में विलम्बकारी प्रस्ताव के लिये यह वजह ठीक नहीं ।

श्री वीर स्वामी (मयूरम--रक्षित अनुसूचित जातियां) : सदन में यह तय हुआ था कि प्रवर समिति जब इस विधेयक पर चर्चा करे तो वह मूल अधिनियम में हेर-फेर कर सकती है । परन्तु संयुक्त प्रवर समिति ने ऐसा नहीं किया है ।

अध्यक्ष महोदय : मैं इस बात के गुण-दोषों में नहीं जाना चाहता परन्तु प्रवर समिति से और विमति टप्पणियों से पता चलता है कि मूल अधिनियम को समिति ने पूरी तरह से ध्यान में रखा था ।

श्री एच० एन० मुखर्जी (कलकत्ता उत्तर-पूर्व) : सबसे पहले मैं यह कहना

चाहता हूं कि आप कृपया नियम ९७ (२) के बारे में अपने निर्णय पर फिर से विचार करें और उसकी अधिक उदारता से व्याख्या करें । दूसरे, मैं समझता हूं कि संयुक्त समिति की रिपोर्ट एक इस प्रकार का लेख्य है जिसे लोक मत जानने के लिये परिचालित कराना बहुत आवश्यक है । इस रिपोर्ट के साथ पांच विमति टिप्पणियां संलग्न की गई हैं जिनमें बड़े ठोस सुझाव रखे गये हैं ताकि इस अधिनियम की कठोरता को कम किया जा सके । परन्तु संयुक्त समिति ने इन सब को ठुकरा दिया प्रतीत होता है । मूल अधिनियम के उपबन्धों पर भी पूर्ण गंभीरता के साथ विचार नहीं हुआ है । इसके अलावा समिति की बहुसंख्या द्वारा जो रिपोर्ट पेश की गई है उससे पता चलता है कि विभिन्न दलों के प्रतिनिधियों ने पूरी सावधानी के साथ भी जो तर्क प्रस्तुत किये थे, उन पर कोई ध्यान नहीं दिया गया है । अतः मैं समझता हूं कि इस प्रकार के विधेयक को जनता की राय मालूम करने के लिये परिचालित किया जाना चाहिये ।

श्री एम० ए० आय्यंगर (तिरूपति) : मैं इस समिति का अध्यक्ष था । यह कहना बिल्कुल ग़लत है कि सदस्यों ने जो विचार वहां प्रगट किये उन पर ध्यान नहीं दिया गया । सारे माननीय सदस्यों को प्रवर समिति में अपने सुझाव रखने और मूल अधिनियम के बारे में संशोधन रखने का पूरा मौक़ा दिया गया था । किसी ने भी यह शिकायत नहीं की कि समिति में कार्य जल्दी जल्दी किया जा रहा है । मुझे तो लोगों ने समिति का कार्य इतनी अच्छी तरह चलाने पर बधाई दी है । हम तो सारी कार्यवाही को लिखवाते रहते हैं और यदि आप इस कार्यवाही के विवरण को उन माननीय सदस्यों को दें जो उसे देखना चाहते हों, तो उन्हें पता लगेगा कि जो भी बातें उन्होंने उठाईं, उन पर विचार किया गया था । अतः मैं समझता हूं कि यह एक विलम्बकारी प्रस्ताव है ।

श्री एस० एस० मोरे : मंत्रणा पर्षद के कुछ सदस्यों के विचारों पर भी प्रवर समिति को ध्यान देना चाहिये था ।

अध्यक्ष महोदय : शान्ति, शान्ति । आप उन बातों की ओर निर्देश कर रहे हैं जो आपकी राय में प्रवर समिति को मान्य होने चाहियें थे । यह चीज़ दूसरी है । इसका यह मतलब नहीं कि प्रवर समिति ने उन पर विचार ही नहीं किया है ।

डा० पी० एस० देशमुख (अमरावती पूर्व) : श्रीमान् मैं आपका ध्यान दो बातों की ओर दिलाना चाहता हूं । एक तो यह कि प्रवर समिति दो सदस्यों यानी श्री सुन्दरैया और श्री गोपालन ने अपनी विमति टिप्पणियों में इस अधिनियम को चार जगह "काला अधिनियम" कहा है । क्या इस प्रकार की भाषा का विमति टिप्पणियों में प्रयोग करना उचित है ? दूसरी बात यह कि एक माननीय सदस्य यानी दीवान चमनलाल ने वास्तव में सहमति-टिप्पणी संलग्न की है परन्तु उसे उन्होंने विमति टिप्पणी कहा है । मैं इस बात को भी आपके ध्यान में लाना चाहता था ।

अध्यक्ष महोदय : मैंने विमति टिप्पणियों को पढ़ा नहीं है । आपने जो बात कही है वह वास्तव में विचारणीय है और मैं इसकी जांच करूंगा ।

अब हम विधेयक पर अग्रेतर चर्चा शुरू करते हैं ।

श्री एन सी० जटर्जी : जब प्रधान मन्त्री ने सदन में यह घोषणा की कि संयुक्त समिति इस विधेयक के कुछ खंडों पर ही विचार न करेगी बल्कि मूल अधिनियम की हर एक

[श्री एन० सी० चटर्जी]

धारा और खंड पर भी वह विचार कर सकती है तो हमारे सारे सन्देह दूर हो गये थे। हमने सोचा कि अब संयुक्त समिति में हमारे दृष्टिकोण अच्छी तरह व्यक्त किये जा सकेंगे और हम अधिनियम के कुछ बहुत आपत्तिजनक उपबन्धों को उसमें से हटाने का प्रयत्न कर सकेंगे। परन्तु हमारी यह आशायें झूठी साबित हुईं। हमारे छोटे छोटे संशोधनों को भी ठुकरा दिया गया। हमने समिति के सामने कुछ युक्तियुक्त सुझाव, जो नागरिक अधिकार संघ ने दिये थे, रखे। परन्तु समिति ने किसी को नहीं माना। मैं यहां पूरी गम्भीरता से यह बताना चाहता हूं कि इस विधेयक द्वारा इस सदन की, इस संसद् की--इस प्रथम संसद् की परीक्षा हो रही है। हम चाहते थे कि इस विधेयक में से कुछ असन्तोषजनक उपबन्ध हटा दिये जायें परन्तु ऐसा करने का हमें अवसर नहीं दिया गया। माननीय गृह मन्त्री के लिये हमारे सम्बन्ध में यह कहना अनुचित था कि हम इस अधिनियम को असफल बनाना या उसे पारित ही नहीं होने देना चाहते हैं। हमारा विचार ऐसा न तो कभी रहा और न है।

हम समझते थे कि माननीय मन्त्री इस अधिनियम को आगे जारी रखने के लिये हमारे सामने कुछ तथ्य और आंकड़े रखेंगे। उद्देश्य और कारणों के विवरण में कहा गया है कि इस कानून को इसलिये बनाया जा रहा है कि संविधान को उलटने और शान्ति भंग करने की कार्यवाहियों को रोका जाये और सारभत प्रदायों तथा सेवाओं को बनाये रखने में कोई अड़चन न आये। उसमें आगे कहा गया है कि यह कार्यवाहियां कम तो हो गई हैं पर बन्द नहीं हुई हैं। हम चाहते थे कि इस बात को प्रमाणित करने के लिये कुछ तथ्य हमारे सामने रखे जाते। परन्तु ऐसा कुछ नहीं किया गया। हमारा यह कहना है कि एक सभ्य प्रकार की शासन प्रणाली में किसी व्यक्ति को बिना मुकद्दमा चलवाये नज़रबन्द करना शोभा नहीं देता है; यह एक बहुत ग़लत तरीक़ा है। मैं स्वतन्त्र भारत की इस महान् संसद् से अपील करता हूं कि हमारे संविधान में निहित व्यक्तिगत स्वतन्त्रता और अन्य अधिकारों के नाम में, जिन पर हम बहुत गर्व करते हैं, हमें कम से कम वे सुरक्षण, के अधिकार तो दिये जायें जो लड़ाई के ज़माने में राज्य-सुरक्षा नियमों में से नियम १८ बी के अन्तर्गत नज़रबन्दों को प्राप्त थे। हम इसी बात पर ज़ोर दे रहे थे। हमारा कहना था कि तीन बातों का अवश्य उपबन्ध होना चाहिये: निष्पक्ष सुनवाई, आरोप का नियम-पूर्वक लगाया जाना, स्वतन्त्र न्यायपालिका और वकीलों से मुकद्दमों की पैरवी करवाने का अधिकार। मैं डा० काटजू का बड़ा सम्मान करता हूं परन्तु जब उन्होंने यह कहा कि नज़रबन्द को वकील न करने दीजिये तो मुझे बड़ा आश्चर्य हुआ। चाहे जज कितनी ही सहानुभूति करता हो और कितने ही ध्यान से मुक़द्दमा सुनता हो, फिर भी बहुत ही कम लोग ऐसे होंगे जो न्यायालय के अन्दर अपनी बात ठीक तरह कह सकें। मैं तो समझता हूं कि किसी ऐसे व्यक्ति के लिये जिसका मुक़द्दमा चल रहा हो, सबसे बड़ी दुर्भाग्य की बात यह है कि उससे अपना वकील करने को मना कर दिया जाये और वह अपनी पैरवी स्वयं करे। मैं माननीय मन्त्री की यह बात कभी नहीं मान सकता कि वकील करने से नज़रबन्द को नुकसान होगा। हमारी राय में यह चीज़ नज़रबन्द की इच्छा पर छोड़ देनी चाहिये। इस बात का फ़ैसला करना उसका अधिकार होना चाहिय कि वह वकील करे या न करे।

[उपाध्यक्ष महोदय अध्यक्ष-पद पर आसीन हुए]

इंग्लैण्ड के बड़े बड़े न्यायज्ञों का भी यही अनुभव है कि बिना वकील के कोई भी व्यक्ति अपनी बात न्यायालय में उचित प्रकार से नहीं कह सकता।

हमने कहा था कि कम से कम मंत्रणा समितियों को वह सारी सामग्री दी जानी चाहिये जो सरकार के पास है। इसे भी नहीं माना गया। फिर हमने कहा कि मंत्रणा समिति को किसी भी ऐसे व्यक्ति को बुलाने का, जो कि जज साहब की राय में मामले की छानबीन में सहायता दे सकता है, अधिकार होना चाहिये। इस सुझाव को भी ठुकरा दिया गया। सन् १९४१-४२ में जबकि इंग्लैण्ड भारी संकट में था, वहां के न्यायज्ञों ने इस बात की अनुमति दे रखी थी। परन्तु हमारे यहां इसे अस्वीकार कर दिया गया। जब १८१८ के दंडविधि संशोधन अधिनियम तथा नियम ३ के अन्तर्गत कांग्रेसी पकड़े गये थे, तब तो उन्होंने बड़ा शोर मचाया था और कहा था कि हम स्वतन्त्रता की लड़ाई लड़ रहे हैं हम ऐसे सारे कानूनों को तोड़ देंगे। आप इस ख्याल में न रहिये कि इस प्रकार के निवारक निरोध से आप कम्युनिस्टों को दबा सकेंगे। अंग्रेज़ भी सोचते थे कि इन तरीक़ों से वे कांग्रेस को कुचल देंगे मगर वह ऐसा कर न सके और न ही आप इन तरीकों से सफल होंगे। आप इस प्रकार का रवैया अपना कर भारत की कुसेवा कर रहे हैं। आप एक ओर तो यह कहते हैं कि स्वतन्त्र भारत में पूर्ण न्याय होगा, अत्याचार को कुचल दिया जायेगा, सब लोगों को अपनी स्वतन्त्रता बनाय रखने का अधिकार होगा और बिना मुकद्दमा चलाये किसी को नजरबन्द नहीं रखा जायेगा, दूसरी ओर आप इस तरह की बातें करते हैं यह कहां तक ठीक है? डा० काटजू इस विधेयक को 'आदर्श विधेयक' कहते हैं। मैं समझता हूं उन्हें यह कहने में शर्म आनी चाहिये थी, आप नजरबन्द को वकील नहीं करने देते, आप गवाहों को बुलाने के लिये मना करते हैं न ही आप उनसे जिरह करने देते हैं। क्या ये सब उचित है? क्या इससे हम विधेयक को आदर्श मान सकते हैं? आप जानते हैं कि इन अधिकारियों द्वारा इस कानून का दुरुपयोग हुआ है। न्यायालयों ने अनेक बार नज़रबन्दों को छोड़ा है। यदि आप किसी को नज़रबन्द करते हैं तो उसे कम से कम अपना बचाव करने का मौक़ा तो दीजिये। उसे कम से कम सारी बातें तो बताइये जिनके आधार पर उसे पकड़ा गया है। हमारी इन सारी बातों को प्रवर समिति ने ठुकरा दिया गया। फिर हमने कहा कि इस कानून को केवल एक वर्ष के लिये ही बढ़ाया जाये। यदि एक साल बाद स्थिति ऐसी हो कि इस कानून के बिना काम न चल सके तो फिर अवधि बढ़ा दीजिये। परन्तु इस पर भी वे राजी न हुए।

हमने यह सुझाव दिया था कि "वैदेशिक संबन्ध" शब्दों को हटा दिया जाये। परन्तु हमारे सुझाव पर गम्भीरतापूर्वक विचार नहीं किया गया। आखिर किसी भी व्यक्ति को इस आधार पर नज़रबन्द क्यों किया जाये कि वह ऐसी बातें कहेगा या करेगा जिससे अन्य देशों के साथ हमारे सम्बन्धों को खतरा पहुंचे। हम जानते हैं कि 'अन्य देश' कौन से हैं। हर व्यक्ति को यह कहने और बताने का अधिकार है कि पाकिस्तान में या कहीं और अमुक बात ऐसी हो रही है जो हमारे हित में नहीं है। हम सबको इसका अधिकार है। इन शब्दों का हटाया जाना आवश्यक एवं उचित था। पंडित कुंजरू जैसे गम्भीर और अनुभवी व्यक्ति ने भी इस बात का समर्थन किया था, परन्तु हमारी बात नामंज़ूर कर दी गई।

हमने कहा था कि इस क़ानून को इंग्लैंड के क़ानून के आधार पर बनाइये। इसको लागू करने का काम ज़िला मजिस्ट्रेटों या

[श्री एन० सी० चटर्जी]

पुलिस कमिश्नरों पर ही न छोड़िये । इंग्लैण्ड के क़ानून और हमारे क़ानून में तीन बातों का अन्तर है । एक तो यह केवल युद्धकाल में ही लागू किया जा सकता है । दूसरे उन्होंने यह अधिकार ज़िला मजिस्ट्रेट या किसी अन्य निम्न अधिकारी को नहीं दिया । यह अधिकार उन्होंने केवल मंत्री को ही दिया। तीसरे वहां गृह मन्त्री तक ही यह क़दम उठ सकता है जब उसके पास इसके लिये उचित आधार हों और जब उसे विश्वास हो कि सम्बन्धित व्यक्ति ने हाल ही की किसी अनुचित कार्य-वाही में भाग लिया है । हमने यही सुझाव दिया था । परन्तु इसे भी नहीं माना गया । हम अब भी यही कहते हैं कि इस क़ानून को लागू करने का कार्य उत्तरदायी मन्त्रियों के हाथ में होना चाहिये । इसके बाद, हम यह चाहते थे कि यह अधिनियम उसी राज्य या राज्य के उसी भाग में लागू हो जहां कि केन्द्रीय सरकार की राय में, स्थिति ऐसी हो कि इस असाधारण क़ानून का जारी करना आवश्यक हो । इसे सारे भारत में आप क्यों लागू करते हैं ? यह एक बहुत न्याययुक्त और उचित सुझाव था ।

मैं मानता हूं कि कुछ विधेयक में परि-वर्तन किये गये हैं । परन्तु इनका कोई विशेष महत्व नहीं है, फिर भी मैं सरकार का आभारी हूं । एक परिवर्तन तो यह है कि हर निरोध आदेश को १५ दिन के बजाय १२ दिन के अन्दर राज्य सरकार से अनुमोदित करवाया जाये । दूसरे निरोध के पांच दिन के अन्दर नज़रबन्द को उसके कारण बताये जायें । तीसरे हर एक मामला मंत्रणा पर्षद् के पास ४२ दिन के बजाय ३० दिन के अन्दर भेजा जाये । फिर पर्षद का अध्यक्ष उच्च न्यायालय का न्यायाधीश होगा । अन्त में, कार्यपालिका अधिकारी के लिये यह आवश्यक है कि वह नज़रबन्द के मामले से सम्बन्धित सारी सामग्री राज्य सरकार के पास भेजे । एक बात मैं ज़रूर कहना चाहता हूं । हमें जो कुछ भी फ़ायदा हुआ है वह यह है कि अब उसी व्यक्ति के बारे में जो पहले एक बार नज़रबन्द किया जा चुका है, फिर से उन्हीं पुराने आरोपों को लेकर गिरफ्तारी या नज़रबन्दी का आदेश जारी नहीं किया जा सकता । इसके लिये नई घटनाओं से सम्बन्धित नयां निरोध आदेश जारी करना आवश्यक है ।

मेरी अब भी यही धारणा है कि यह अधिनियम भारत के प्रजातन्त्रात्मक शासन पर एक कलंक के समान है । इस प्रकार का क़ानून वर्तमान समय के अनुकूल प्रतीत नहीं होता । माननीय मन्त्री ने जो आंकड़े दिये हैं उनसे प्रगट होता है कि १२४१ मामलों में, जिनमें मन्त्रणा पर्षदों ने नज़रबन्दों को छोड़ा है, ज़रूर निर्दोष व्यक्तियों को पकड़ा गया होगा । दूसरे शब्दों में इस अधिनियम का अवश्य दुरुपयोग हुआ होगा । यह एक बहुत अनुचित बात है और इसे रोकना हमारा सब का कर्तव्य है । हमें समय के अनुकूल चलना चाहिये और ऐसा वातावरण उत्पन्न करना चाहिये जिससे जन साधारण को यह अनुभव हो कि वह केवल एक मशीन नहीं है या केवल कर देने वाला ही नहीं है बल्कि उसकी भी कुछ आवाज़ है उसका भी कुछ अस्तित्व है और देश के शासन में उसका भी कुछ हाथ है । तब ही उसे पता चलेगा कि उसके साथ न्यायपूर्ण व्यवहार हो रहा है और तब ही वह सोचेगा कि वे लोग जिन के हाथ में आज सत्ता है, अपने सिद्धान्तों का केवल मौखिक प्रचार ही नहीं करते थे वे उन्हें कार्यान्वित करने को भी उतने ही तत्पर हैं ।

डा० रामा राव (काकिनाडा) : मैं उन लोगों में से एक हूं जिन्हें केवल एक मौलिक अधिकार प्राप्त है और वह है बिना मुकद्दमा चलाये नज़रबन्द होने का अधिकार । इसी

निरोध के कारण मैं अब तक इस सदन का सदस्य नहीं हो सका था। शायद मैं फिर से इस सदन का सदस्य न हो सकूंगा क्योंकि मुझे फिर से सरकार के विरुद्ध आन्दोलन करने के अधिकार का प्रयोग करना होगा, और निवारक निरोध अधिनियम के अन्तर्गत मैं पुनः नज़रबन्द कर लिया जाऊंगा।

ख़ैर, मैं आपको यह बताना चाहता हूं कि मुझे किस कारण नज़रबन्द किया गया। निरोध-आदेश में मेरे विरुद्ध यह लिखा गया था यह व्यक्ति एक पक्का साम्यवाद है और मुख्य साम्यवादी नेताओं के गिरफ्तार हो जाने पर रामचन्द्रपुरम् में यह ही व्यक्ति सारा आन्दोलन चला रहा था। यह साम्यवादी अख़बार 'प्रजा शक्ति' पर लगाये गये प्रतिबन्ध को हटाने के लिये साम्यवादी झुकाव के मज़दूरों को भड़काता रहा है। यह अभियोग मद्रास सरकार द्वारा मुझ पर लगाये गये। यद्यपि संविधान के अन्तर्गत हमें कई मौलिक अधिकार जैसे अभिव्यक्ति का अधिकार, सार्वजनिक सभाओं में भाषण देने का अधिकार आदि दिये गये हैं, फिर भी इनका कोई ध्यान नहीं रखा गया। आदेश में आगे लिखा है कि इसने 'मई दिवस' पर जलूस निकलवाये और कांग्रेस सरकार के तथा पुलिस के विरुद्ध नारे लगवाये। पहले तो यह बातें सच्ची नहीं हैं, दूसरे यदि ये ठीक हैं तो इनमें कानून की कोई खिलाफ़त नहीं है। जुलूस पर प्रतिबन्ध लगाने के बारे में १४४ धारा या कोई अन्य धारा नहीं लगी हुई है। आगे इसमें कहा गया है कि इसने धारा १४४ के अन्तर्गत दिय गये आदेशों को न मानने के लिये मज़दूरों को भड़काया। पहले तो यह बात बिल्कुल झूठ है, दूसरे केवल आदेश से यह सिद्ध नहीं होता कि मैंने आदेश का विरोध किया। मुझ कभी इस बात का मौक़ा नहीं दिया गया कि मैं अपना बचाव कर सकूं और यह कह सकूं कि अमुक बात में कहां तक सचाई है और कहां तक झूठ।

वर्तमान विधेयक पुलिस को वही अधिकार दे रहा है और मुझे उसी निस्सहाय दशा में रख रहा है। नज़रबन्द को यह मौक़ा ही नहीं दिया जा रहा है कि वह अपनी बात कह सके। केवल पुलिस की बात पर उसे पकड़ लिया जाता है। मैं आपको एक घटना सुनाऊं। सन् १९४१ में मैं विशाखापटनम् के जनरल अस्पताल से एक आपरेशन करवा कर लौटा। लौटने पर स्थानीय डाक्टर और उप-विभागीय मजिस्ट्रेट में मेरे बारे में बात हुई। जब मजिस्ट्रेट को उनसे पता चला कि मैं तीन दिन हुए ही वहां आया हूं तो उसने डाक्टर से कहा, "आपने मुझे बता कर अच्छा किया वरना मैं तो उसके खिलाफ़ इस आधार पर निरोध आदेश जारी कर रहा था कि बीस दिन हुए उसके यहां एक छिपा हुआ कम्युनिस्ट आकर रहा।" तो इस तरह मैं नज़रबन्द होने से बाल बाल बचा। मैं दो महीने से बाहर था और वे मुझ पर यह आरोप लगा रहे थे कि बीस दिन हुये एक कम्युनिस्ट आकर मुझ से मिला। अगर डाक्टर न होता तो मैं पकड़ा जाता और फिर मुझे अपना बचाव करने का कोई मौक़ा न मिलता।

उपाध्यक्ष महोदय : आप किस निरोध-आदेश की चर्चा कर रहे हैं। उसकी तारीख़ क्या है ?

डा० रामा राव : बहुत से निरोध-आदेश हैं। सबसे पहले मैं २४ जून १९४८ को नज़रबन्द हुआ था। उसके बाद फिर कई आदेश जारी हुए। वास्तव में मैं तीन वर्ष से अधिक से एक से आधारों पर ही जेल में रखा गया हूं।

उपाध्यक्ष महोदय : यह चीज़ प्रवर समिति की सिफ़ारिश में से दूर हो गई है। एक से आधारों पर दूसरा निरोध आदेश जारी नहीं किया जा सकता।

डा० रामा राव : मुझ से पूछिये जिसने हमेशा से इन चीज़ों का अनुभव किया है। मैं जानता हूं किस प्रकार नये आरोप लगा कर, जिस भी व्यक्ति को पकड़ने का इरादा हो, पकड़ा जा सकता है। कोई प्रश्न करने वाला नहीं। जैसा ब्रिटिश सरकार ने किया, वैसे ही यह कांग्रेस सरकार अपने उद्देश्यों की पूर्ति के लिये क़ानून का प्रयोग करती रही है। अंग्रेज़ों ने कम से कम इसे युद्ध काल में काम में लिया; आप बिना किसी संकट स्थिति के इसका प्रयोग कर रहे हैं।

मैं यह कभी नहीं मान सकता कि दो वर्ष बाद यह क़ानून ख़त्म कर दिया जायेगा। यह तो तब तक रहेगा जब तक यह सरकार यहां बनी रहेगी। यह सरकार सारे विरोध को इस क़ानून के ज़रिये ख़त्म करना चाहती है। यह सरकार अधिकारियों में और पुलिस कर्मचारियों में अराजकता की भावना पैदा कर रही है जिससे वे बिना किसी आधार के चाहे जिस व्यक्ति को जेल में डाल सकें। मुझे ऐसे कई उदाहरण ज्ञात हैं जहां लोगों को राजनैतिक कारणों के अतिरिक्त अन्य कारणों पर पकड़ा गया है। विजयनगरम् में एक कांग्रेसी वकील थे। उनकी गलती यह थी कि वह मज़दूर संघों की ओर से श्रम न्यायाधिकरणों के सामने गये और उनके पक्ष में बोले। दुर्भाग्य से वह मिल मालिकों के विरुद्ध जीत भी गये। इस पर मिल मालिक नाराज़ हो गये और उन्होंने उन महाशय को जेल भिजवा दिया। इस तरह की बहुत सी घटनायें मैं आपको सुना सकता हूं। पुलिस वालों और न्य स्थानीय अधिकारियों में अराजकता की यह जो भावना पैदा की गई है, हमें इसे रोकना चाहिये। आन्ध्र में सन् १९४९, १९५० और १९५१ के कुछ भाग में विधिवत् शासन का चिह्न दिखाई नहीं देता था। पुलिस वाले चाहे जिसको गिरफ्तार कर सकते थे। लोगों को बहुत परेशान किया जाता था, यहां तक कि उन्हें जान से मार भी दिया जाता था। पीठापुरम् के पास के एक गांव में दो कम्युनिस्ट पकड़े गये; सैंकड़ों लोगों ने देखा कि उन्हें गांव से बाहर ले जाया जा रहा है। दूसरे दिन उन दोनों को मार डाला गया। अख़बारों में हमेशा की तरह, वही रिपोर्ट आई कि सशस्त्र कम्युनिस्टों और पुलिस वालों में मुठभेड़ हुई जिसके फलस्वरूप दो कम्युनिस्ट मारे गये, शेष भाग गये। ऐसी रिपोर्टें आज आप 'हिन्दू' और 'इंडियन एक्सप्रेस' की पुरानी प्रतिलिपियों में बहुत देख सकते हैं।

श्री बी० शिवा राव : श्रीमान् मैं चाहता हूं कि माननीय सदस्य से इन घटनाओं की तिथि दिये जाने को कहा जाये।

उपाध्यक्ष महोदय : जहां तक तथ्यों का प्रश्न है, यह बात ठीक ही है कि उनके बारे में ठीक ठीक समय, स्थान, ज़िला व व्यक्ति आदि को बताया जाये जिससे कि दूसरा पक्ष उनके द्वारा कहे गये आरोपों को खंडन करे या उन्हें स्वीकार करे।

श्री बी० शिवा राव : मैं यह नहीं चाहता कि ठीक ठीक तारीख़ ही बतायी जाये। बस यही बताना काफ़ी है कि अमुक वर्ष में यह घटना हुई।

उपाध्यक्ष महोदय : जहां तक सम्भव हो, यह तथ्य १९४७ के बाद के समय के बारे में होने चाहियें।

डा० रामा राव : यह सब १९५० में हुआ। मैं तो केवल इतना कहना चाहता हूं कि यदि माननीय श्री शिवाराव स्वयं पीठापुरम् जायें और वहां के कांग्रेसियों से इस घटना के बारे में पूछ-ताछ करें और यदि उन्हें यह पता लगे कि मैंने जो कुछ कहा है वह झूठ है तो मैं यहां से त्याग पत्र देने को तैयार

हूं। मैं अभी और बहुत सी बातें आपके सामने रखूंगा और यदि माननीय उन्हें झूठा साबित कर सकें तो मैं अपना त्याग पत्र उनके हाथों में सौंप दूंगा।

मैं यह सब इसलिये कह रहा हूं क्योंकि विधिवत् शासन के स्थान पर इस समय हमारे यहां एक प्रकार से अराजकता का राज है। सन् १९४८ में मलाबार में श्री मयुरत् शंकरन् नामक एक व्यक्ति को गिरफ्तार किया गया और दूसरे दिन उसे बहुत बुरी हालत में जेल अधिकारियों को सौंपा गया जहां उसकी मृत्यु हो गई। जब वह हिरासत में था तो पुलिस ने उस पर बड़ा अत्याचार किया था और उसे बहुत मारा था जिसके कारण उसकी मृत्यु हो गई। यह है उस अराजकता के राज का एक उदाहरण। ऐसी बातें कई स्थानों पर हुई हैं।

मैं यह कहना चाहता हूं कि इस अधिनियम का प्रयोग केवल संकट-समय में ही होना चाहिये। प्रवर समिति ने इस सुझाव को ठुकरा दिया। मैं कुड्डालोर जेल में था जहां मुझे बिना किसी आधार या कारण के बन्द किया गया था। मुझ से सारी चीजें छीन ली गईं, मुझे पीटा गया, मुझ पर गोली भी चलाई गई। मेरा स्वास्थ्य इस समय बिल्कुल नष्ट हो चुका है। ये अत्याचार मेरे ऊपर केवल इसलिये किये गये कि मैंने एक समाचार पत्र पर से प्रतिबन्ध हटाने के लिये आन्दोलन करने के बारे में एक सार्वजनिक भाषण दिया था। यह १९४९ की बात है। माननीय श्री शिवा राव कुड्डालोर सेन्ट्रल जेल जाकर मालूम कर सकते हैं कि किस प्रकार लोगों को पीटा गया था, किस प्रकार पुलिस की गोली से दो व्यक्ति मारे गये थे, एक की आंख फूट गई थी और एक लंगड़ा हो गया था। वह उस स्थान को भी देख सकते हैं जहां मेरे ऊपर चलाई गई गोली का निशान बना हुआ है। यदि उन्हें इन बातों के ग़लत होने का पता चले तो मैं त्याग पत्र देने के लिये तैयार हूं। इतना होते हुए भी इस घटना की कोई जांच नहीं करवाई गई। हमने इसके लिये बहुत ज़ोर दिया और हमारे दो सौ साथियों ने २७ दिन तक भूख हड़ताल की। परन्तु फिर भी कोई जांच नहीं हुई। एक बात और। इस घटना के एक दिन पहले, हमारी भेंटें बन्द कर दी गई थीं, एक महीने के लिये हमारे पत्रादि पर रोक लगा दी गई थी। हमें किसी से भी नहीं मिलने दिया जाता था। अगले दिन हम एक जुलूस बना कर जा रहे थे। जुलूसों पर कोई रोक नहीं थी और जेल के अधिकारी इस पर आपत्ति नहीं करते थे। ख़ैर हम जा रहे थे कि इतने में हमने देखा कि फाटक पर बहुत से सशस्त्र सिपाही खड़े हैं और उनके आगे सुपरिन्टेन्डेन्ट महोदय आदेश देने को तैयार खड़े हैं। यदि वे हमें यह बता देते कि हमारा जुलूस निकालना उचित नहीं है तो हम नहीं निकालते परन्तु उन्होंने ऐसा नहीं किया और बिना हमें सूचना दिये, हम पर हमला बोल दिया।

उपाध्यक्ष महोदय: माननीय सदस्य असंगत बातों पर चर्चा कर रहे हैं। हर एक माननीय सदस्य का जेल में अपना अपना अलग अनुभव है। यदि वह सुनाने लगे तो इसका अन्त नहीं हो सकता। इस प्रकार की बातों से बहस को लम्बा करना ठीक नहीं होगा। सदस्यों के लिये यह कहना तो ठीक है कि जेलों में अमुक सुविधायें मिलनी चाहियें, वहां ऐसे अत्याचार होते हैं और जेल अधिकारियों को कौन कौन सी बातों का प्रबन्ध करना चाहिये। हर सदस्य के लिये सरकार का इस ओर ध्यान दिलाना उचित है, उसे यह अवश्य करना चाहिये। परन्तु मैं इसके लिये बहुत से उदाहरणों का दिया जाना आवश्यक नहीं समझता। केवल एक घटना ही काफ़ी है।

डा० रामा राव: मैं केवल यही कहना चाहता हूं कि जेलों में किस प्रकार अत्याचार

[डा० रामा राव]

और गन्दा व्यवहार किया जाता है । मेरा कहना तो यही है कि इस कानून का प्रयोग केवल संकट समय में ही किया जाना चाहिये। एक मामूली से कार्यपालिका अधिकारी को यह अधिकार देना बिल्कुल उचित नहीं जिससे कि वह चाहे जिस व्यक्ति को गिरफ्तार कर सके। यह अधिकार केन्द्र के अथवा राज्यों के गृह मन्त्रियों को ही दिया जाना चाहिये ।

श्री बी० शिवा राव : मैंने इस विधेयक की प्रवर समिति में भाग लिया था और आज जो भाषण दिये गये हैं उन्हें भी मैंने पूरे ध्यान से सुना है । मेरे माननीय मित्र श्री चटर्जी के भाषण से मुझे बड़ी निराशा हुई जब उन्होंने यह कहा कि प्रवर समिति में अन्य दलों के हर सुझाव को ठुकरा दिया गया। उनका यह आरोप निराधार है। बाद में उन्होंने अपनी बात में संशोधन किया और बड़ी आनाकानी से इस बात को माना कि कुछ छोटे छोटे परिवर्तन किये गये हैं। प्रवर समिति की अपनी रिपोर्ट से भी यह प्रकट होता है कि यह बात ग़लत है कि अन्य दलों के सारे सुझावों को जान बूझ कर ठुकरा दिया गया ।

माननीय गृह मन्त्री ने आज सवेरे बताया कि विधेयक में कैसे कैसे और क्या क्या संशोधन किये गये हैं। मैं इस विषय में सविस्तार कहना चाहता हूं ।

गत चार वर्षों में निवारक निरोध चार अवस्थाओं से गुज़रा है और मेरे विचार में हर अवस्था पर इसमें कार्यपालिका के अधिकारों पर कुछ न कुछ रोक लगाई गई है और नज़रबन्दों को अधिक सुरक्षण या रियायतें दी गई हैं। मूल अधिनियम तथा प्रवर समिति के ख़िलाफ़ जो बातें कही गई हैं उनमें से अधिकतर बातें १९४८ व १९४९ के बारे में ठीक हो सकती हैं। मैं यह इसलिये कह रहा हूं कि सन् १९५० में जाकर सरदार पटेल इस निवारक निरोध के मामले को केन्द्रीय सरकार के सामने लाये ।

इस समय यानी, १९५२ में बैठे हुए १९४८ या १९४९ में शासन द्वारा किये गये कार्यों की आलोचना करना बड़ा सरल है, परन्तु हमें यह भी याद रखना चाहिये कि उस समय देश की स्थिति क्या थी। १९४२ के आरम्भ में ही बिड़ला भवन में एक महान् दुर्घटना हुई थी और उस समय केन्द्र में और राज्यों में हमारे अधिकारियों ने इस बात को गम्भीरतापूर्वक सोचा था कि क्या वे इस दुर्घटना को अधिक सतर्क होकर रोक सकते थे । इसके बाद विभाजन सम्बन्धी इतनी कठिनाइयां थीं; सारी व्यवस्था भंग हो रही थी । फिर राज्यों में बहुत से वरिष्ठ अधिकारियों के अवकाश ग्रहण करने के फलस्वरूप कनिष्ठ एवं कम अनुभव वाले अधिकारियों को ज़िम्मेवार स्थानों पर लगाया गया। इसी कारण बहुत से मामलों में उन्होंने जल्दबाज़ी से काम लिया जिसकी और कई उच्च न्यायालयों ने भी निर्देश किया है। परन्तु हमें इसका दूसरा पहलू भी देखना चाहिये। कनिष्ठ अधिकारियों के सामने जब इस प्रकार की समस्यायें आईं तो उन्होंने यही ठीक समझा कि देश की सुरक्षा को नागरिक की स्वतन्त्रता से अधिक महत्व दिया जाये। यह ठीक है कि आगे चल कर उच्च न्यायालय इनके फ़ैसलों से सहमत नहीं हुए। ख़ैर, १९४२ व १९४९ में यह स्थिति थी जब निवारक निरोध के मामले मन्त्रणा पर्षदों को नहीं भेजे जाते थे ।

सन् १९५० के आरम्भ में सरदार पटेल इस क़ानून को पिछले दो वर्षों के अपने अनुभव को ध्यान में रखते हुए यहां इस सदन में लाये। उस समय वह सोचते थे कि नज़रबन्दों को इससे अधिक रियायतें नहीं दी जा सकतीं।

गृह मन्त्री महोदय ने यह बताया था कि १९५० के मूल अधिनियम के अन्तर्गत यद्यपि मन्त्रणा पर्षद थे परन्तु उनके पास बहुत कम मामलों को जैसे उन मामलों को जिनका सम्बन्ध आवश्यक प्रदाय व सेवाओं से हो या किसी विदेशी के निरोध से हो, पहुंचाया जाता था। मैंने इस बारे में पता लगाया है। मेरी जानकारी के अनुसार कुल २ या तीन प्रतिशत मामले मन्त्रणा पर्षद के पास जाते थे। जिन मामलों का सम्बन्ध भारत की सुरक्षा या सार्वजनिक व्यवस्था से होता था उन्हें मन्त्रणा परिषद् के सामने नहीं भेजा जाता था। सरकार के चाहने पर इन मामलों की उच्च न्यायालय के न्यायाधीश के ज़रिये या उच्च न्यायालय के न्यायाधीश होने की योग्यता रखने वाले किसी व्यक्ति के ज़रिये पुनः जांच हो सकती थी। परन्तु फिर भी श्री चटर्जी ने यह शिकायत की कि गृह मन्त्री जी ने इस बात की पुष्टि के लिये कोई तथ्य अथवा आंकड़े नहीं दिये कि १९५० में अधिकारीगण कुछ संयम से काम लेते थे। मेरे पास इस सम्बन्ध में कुछ आंकड़े हैं जिन्हें मैं आपके सामने रखूंगा। जुलाई १९४८ में केन्द्रीय सरकार ने समस्त राज्यों के नज़रबन्दों की कुल संख्या इकट्ठी करने का प्रयत्न किया। इसमें दो एक महीने लग गये। श्री गोपालन ने एक अवसर पर इस संख्या को १५००० बताया था। यह संख्या बहुत अधिक थी। वास्तव में नज़रबन्दों की संख्या ८००० से आगे नहीं बढ़ी। १९४८ के उत्तरार्द्ध में यह संख्या ४,८०० थी। इस प्रकार घटते-बढ़ते १९५० के अन्त में नज़रबन्दों की संख्या ८०९० से गिर कर ३,२०० रह गई थी। यह थी उस समय की स्थिति जब केन्द्रीय सरकार ने निवारक निरोध के मामले हाथ में लेने शुरू किये थे।

सरदार पटेल के उत्तराधिकारी श्री राजगोपालाचारी गत वर्ष फ़रवरी में एक संशोधक विधेयक लाये जिसके अनुसार सारे मामलों को तीन सदस्य वाले एक मन्त्रणा परिषद् के सामने रखना आवश्यक है। हमें सरकार की इस निष्पक्ष भावना और उदारता के लिये प्रशंसा करनी चाहिये। विधेयक में यह भी उपबन्ध है कि यदि नज़रबन्द चाहेतो उसकी बात भी स्वयं उससे सुनी जा सकती है। नज़रबन्द को मौखिक शर्त पर छोड़ने की व्यवस्था की गई थी।

इस विधेयक में प्रवर समिति द्वारा कई सुधार किये गये हैं। श्री चटर्जी की शिकायत थी कि कार्यपालिका अधिकारी को बहुत अधिकार दे दिये गये है परन्तु वह यह कहना भूल गये कि अब उस अधिकारी के लिये राज्य सरकार के सामने निरोध संबंधी सारी सामग्री रखना और १२ दिन के अन्दर उसकी मंजूरी लेना आवश्यक हो गया है। दूसरी चीज़ यह है कि राज्य सरकार के लिये अब यह आवश्यक है कि वह निरोध के लिये अपनी स्वीकृति देकर यथा शीघ्र केन्द्रीय सरकार को उसकी सूचना दे। इस प्रकार केन्द्रीय सरकार को आदेश रद्द करने का अधिकार भी है। फिर, एक नये खंड के अनुसार हर एक मंत्रणा पर्षद का अध्यक्ष वह व्यक्ति होगा जो एक उच्च न्यायालय का न्यायाधीश हो या रह चुका हो। मंत्रणा पर्षद को मामला भेजने की समय अवधि भी ६ सप्ताह से घटा कर तीस दिन कर दी गई है। एक और महत्वपूर्ण बात यह की गई है कि अब किसी ऐसे व्यक्ति को, जो नजरबन्द रह चुका है, फिर से नज़रबन्द करने के लिये नये आधार व नये कारण दिये जाने आवश्यक हैं। इस प्रकार हम देखते हैं कि प्रवर समिति ने विधेयक में बहुत कुछ परिवर्तन किये हैं और नज़रबन्दों को बहुत कुछ रियायतें दी हैं। इस कानून की जो कुछ बुराइयां बतलाई गई हैं वे १९४८ या १९४९ के

[श्री बी० शिवा राव]

बारे में है । इसके बाद तो अधिनियम का ढांचा ही बदल दिया गया है ।

मुझे विरोधी पक्ष के सदस्यों से एक और शिकायत है । श्री गोपालन ने अपने भाषण में 'सिविल लिबरटीज़ इन इंडिया' नामक पुस्तक में से बहुत सी बातें पढ़ कर सुनाई । सुनाते समय, उन्होंने सदन पर कुछ ऐसा प्रभाव डाला था कि शायद वह उन विभिन्न निरोध आदेशों में से कुछ भाग पढ़ कर सुना रहे हों जिन्हें मद्रास सरकार ने सार्वजनिक व्यवस्था अधिनियम के अन्तर्गत पारित किया था । मैंने उस पुस्तक को पढ़ा । वह एक बड़ी रोचक पुस्तक है । परिशिष्ट १ में, जिसमें से वह पढ़ रहे थे, किसी भी निरोध आदेश का मूल-पाठ नहीं था । वह तो मद्रास नागरिक स्वतंत्रता संघ के सचिव श्री एस० कृष्णामूर्ति द्वारा तैयार किया गया संक्षिप्त विवरण था जिसमें उन्होंने दिखाया था कि सार्वजनिक व्यवस्था अधिनियम के अन्तर्गत किस प्रकार के आरोप लगाये जाते हैं । उदाहरण के तौर पर उस में था कि एक व्यक्ति को मिल हड़ताल में भाग लेने के कारण नज़रबन्द किया गया था; दूसरे को लाल वर्दी पहनने के कारण, तीसरे को सरकार की खाद्य नीति की आलोचना करने के कारण आदि आदि । इस प्रकार की ग़ैर ज़िम्मेदारी और शरारत भरी बातें उसमें थीं । यह बातें आपके सामने रखी गई थीं । माननीय सदस्य ने कुछ ऐसा प्रभाव डाला मानों वह निरोध आदेशों म से कुछ भाग पढ़ कर सुना रहे हों ।

श्री ए० के० गोपालन : मेरे पास पुस्तक थी और मैं ने यह स्पष्ट कह दिया था कि यह निरोध आदेशों का संक्षिप्त रूप है । मैंने यह नहीं कहा था कि मैं वास्तविक निरोध आदेशों में से पढ़ रहा हूं ।

उपाध्यक्ष महोदय : माननीय सदस्य, श्री शिव राव चाहते हैं कि सदन के सदस्यों पर जो उलटा प्रभाव पड़ा है उसे दूर किया जाये । इसीलिये वह ऐसा कह रहे हैं ।

श्री बी० शिवा राव : अब मैं स्वयं माननीय सदस्य के मामले को लेता हूं । उन्होंने कहा था कि उनके पास निरोध आदेश की प्रतिलिपि है परन्तु उन्होंने उसमें से न पढ़ कर संक्षिप्त विवरण में से पढ़ना ही अधिक अच्छा समझा । उसमें उन्होंने बताया था कि नज़रबन्द किये जाने के क्या कारण थे । जो कारण उन्होंने दिये वे वास्तिविक कारणों से जो निरोध-आदेश में दिये गये थे, बिल्कुल भिन्न थे । उन्होंने सदन पर कुछ ऐसा प्रभाव डाला मानो वह मद्रास सरकार द्वारा उनके लिये जारी किये गये निरोध-आदेश में से पढ़ कर सुना रहे हों । निरोध आदेश में बताया गया था कि किस प्रकार श्री गोपालन ने अमुक तिथि को अमुक नगर में लोगों को पुलिस के या सरकार के विरूद्ध भड़काया, किस प्रकार उन्होंने जनता से पुलिस इंसपेक्टर को मार देने के लिये कहा, किस प्रकार उन्होंने यह कहा कि सरकार में श्यामा प्रसाद मुकर्जी, आर० के० सम्मुखम् चेट्टी और बलदेव सिंह जैसे प्रतिक्रियावादी लोग भरे पड़े हैं आदि आदि । यह हैं वे वास्तविक कारण जिनके आधार पर मद्रास सरकार ने श्री गोपालन के लिये निरोध-आदेश जारी किया था । आदेश के अनुसार, उन्होंने एक भाषण में यह भी कहा था कि यदि वर्तमान स्थिति को यों ही चलने दिया जायगा तो जलियांवाला बाग़ जैसी बहुत सी घटनायें देश में होंगी । इन सब बातों को कहने से मेरा अभिप्राय केवल यह

है कि श्री गोपालन ने सदन पर एक ग़लत प्रभाव डाला था। यह बात दूसरी है कि इन सारे आरोपों को न्यायालय ने नामंजूर कर दिया हो। मैं तो आपको यह बता रहा था कि वास्तव में निरोध आदेश में क्या था और श्री गोपालन क्या सुना रहे थे।

कुछ दिन हुए श्री गोपालन मद्रास उच्च न्यायालय के न्यायाधिपति श्री मैक द्वारा दिये गये निर्णय का कुछ भाग सुना रहे थे। मैं भी इसमें से कुछ सुनाना चाहता हूं। यह निर्णय रामनाथपुरम षड़यंत्र केस के बारे में था जिसमें श्री एम० वी० सुन्दरम् और ४२ अन्य कम्युनिस्ट पकड़े गये थे। श्री सुन्दरम् ने ज़मानत के लिये प्रार्थना पत्र दिया था और उसके साथ एक शपथ पत्र भी संलग्न किया था जिसमें अन्य बातों के साथ यह कहा गया था कि सरकार कम्युनिस्ट पार्टी पर बहुत भारी अत्याचार करने लगी थी जिसके कारण पार्टी के सदस्यों को इन कार्यों का सहारा लेना पड़ा। न्यायाधीश ने अपने फ़ैसले में इसका निर्देश करते हुए कहा है कि बम और गोला बारूद का प्रयोग करने वाले के लिये यह एक विचित्र और आश्चर्यजनक तर्क है। इसका मतलब है कि वे चाहते हैं कि न्यायालय भी बम का प्रयोग करने वाले लोगों का पक्ष ले। इस बात को कभी सहन नहीं किया जा सकता। श्री मैक ने आगे यह भी कहा कि कम्युनिस्ट दल के लोग किस प्रकार फ़रार हो जाते हैं जब कि उनकी किसी मामले में बड़ी आवश्यकता होती है। इसके कारण मामलों को निपटाने में बड़ी देर और दिक्कत होती है। यह एक बहुत अनुचित रवैया है। इस प्रकार श्री मैक ने अपने फ़ैसले में कम्युनिस्टों की कार्यवाहियों का ज़िक्र किया है।

मैं सदन का अधिक समय न लेकर यही कहूंगा कुछ सदस्यों के इस प्रश्न का उत्तर कि यह कानून कब तक चलता रहेगा, सरकारी बैंचों पर बैठे सदस्य नहीं, बल्कि विरोधी बैन्चों पर बैठे सदस्य ही ठीक तरह दे सकते हैं।

श्री सारंगधर दास (ढेनकनाल—पश्चिम कटक) : मैं विधेयक के विस्तार में जाना नहीं चाहता। मैं और मेरा दल इस विधेयक के सिद्धान्त के विरुद्ध था परन्तु मैं प्रवर समिति में इसमें कुछ फेर-बदल करने के विचार से गया था। जैसा अन्य माननीय सदस्यों ने कहा, हम वहां बहुसंख्यक दल को अपने सुझावों से सहमत न करा सके जिसके फलस्वरूप विधेयक में विशेष परिवर्तन नहीं हो सका है।

मैं इस विषय में अमरीका का उदाहरण देना चाहता हूं। लगभग तीस वर्ष हुए मैं वहां था। उस समय साम्यावादी दल का तो जन्म हुआ नहीं था परन्तु अराजकतावादियों से अमरीका के लोग बहुत घबराते थे। जो भी विदेशी वहां जाता था उसकी जांच की जाती थी कि कहीं वह अराजकतावादी न हो। इस पर भी वहां कुछ लोग अराजकतावादी हो गये और उनके नेताओं ने अपना वहां खूब प्रचार किया। सरकार का तख्ता उलटने के लिये वे लोग खुले तौर पर चिल्लाया करते थे। परन्तु आपको सुन कर आश्चर्य होगा कि इसके खिलाफ़ कोई क़दम नहीं उठाया गया। निवारक निरोध क़ानून जैसा कोई क़ानून वहां नहीं बनाया गया क्यों कि यह चीज़ भाषण स्वातन्त्र्य तथा सम्मिलन स्वातन्त्र्य के मौलिक अधिकारों के, जो कि उनके संविधान में निहित हैं, एक दम विरूद्ध है। वहां की जनता संविधान के सिद्धान्तों को बहुत पवित्र मानती है और कोई सी सरकार भी इन अधिकारों के विरूद्ध नहीं जा सकती। इतने पर भी वहां अराजकतावाद को सफलता नहीं मिल सकी।

[श्री सारंगधर दास]

इसके बाद स्थिति में बहुत कुछ अन्तर हो गया है। अब वहां के लोग साम्यवाद और साम्यवादियों से घबराते हैं। परन्तु इनको दबाने के लिये वहां निवारक निरोध अधिनियम नहीं है। हाल ही में वहां के कुछ लोगों न एटम बम संबंधी कुछ गुप्त बातें रूस पहुंचा दी थीं; फिर भी वहां निवारक निरोध क़ानून का सहारा नहीं लिया गया। उनके यहां अपने अलग क़ानून हैं जिनके द्वारा लोगों को दंड दिया जाता है। जापान में भी, जो नया संविधान लागू हुआ है—मैं समझता हूं वह अमरीकी संविधान के अनरूप ही है—उसमें निवारक निरोध का कोई उपबन्ध नहीं है। हाल ही में वहां साम्यवादियों ने झगड़े उठाये थे परन्तु इनको दबाने के लिये निवारक निरोध को काम में नहीं लाया गया। यही चीज़ इंग्लैंड में है।

अब आप हमारे अपने देश को लीजिये। हैदराबाद में, पुलिस कार्यवाही के बाद और रज़ाकारों की पराजय के बाद, कुछ तत्व गड़बड़ करने लगे थे, इस अव्यवस्था के कराण, सरदार पटेल ने जो उस समय गृह मंत्री थे, निवारक निरोध अधिनियम को बड़ी जल्दी जल्दी पारित करवाया। उस समय लोगों पर कुछ ऐसा प्रभाव डाला गया था कि यह एक अस्थाई कानून है। जब हमारे सामने बैठे माननीय सदस्य यह कहते हैं कि वर्त्तमान विधेयक में बहुत कुछ सुधार कर दिये गये हैं और १९५० के बाद से नज़रबन्दों की संख्या भी कम होती जा रही है तो मैं यह कहना चाहता हूं कि क्या हैदराबाद में और आन्ध्र देश में जो अव्यवस्था थी वह कम नहीं हो गई है? सारे देश में इस अधिनियम को लागू करने का कोई कारण नहीं है।

गृह मंत्री और उस ओर के अन्य सदस्य बार बार यह कहते रहे हैं कि यह कानन किसी राजनैतिक दल के विरूद्ध नहीं लागू किया गया है। मेरा विचार तो यह है कि यह कानून न केवल साम्यवादी दल के विरुद्ध ही है बल्कि अन्य समस्त राजनैतिक दलों के विरुद्ध हैं जो कांग्रेस का विरोध करते हैं।

उपाध्यक्ष महोदय : माननीय सदस्य विधेयक के सिद्धान्त पर बहस कर रहे हैं। विधेयक का सिद्धान्त तो मान लिया गया है, इस पर अब बहस नहीं की जा सकती। आप केवल यह कह सकते हैं कि विधेयक में से अमुक बात हटा ली जाये या अमुक सुधार कर दिये जाये।

श्री सारंगधर दास : श्रीमान्, मैं यही कह रहा हूं कि इस कानून को सारे देश में लागू करना अनुचित है। दूसरे, इसमें बहुत कुछ फेर-बदल की भी आवश्यकता है। इन सब बातों को सिद्ध करने के लिये मुझे कुछ घटनाओं की चर्चा करनी होगी। लगभग दो वर्ष हुए आसाम में वहां के मुख्य मंत्री श्री बारदोलाई की मृत्यु के फलस्वरूप हुए उप-चुनाव के सिलसिले में यह कानून लागू किया गया था। समाजवादी पार्टी भी चुनाव लड़ रही थी। उस अवसर पर मेरी पार्टी ने आसाम सरकार को यह सूचना दी थी कि कम्युनिस्ट पार्टी के लोग आसाम के भिन्न भिन्न स्थानों में अपने अड्डे जमा रहे हैं, इसलिये उन पर कड़ी निगरानी रखी जानी चाहिये। परन्तु सरकार ने कुछ नहीं किया। उसने उलटे समाजवादी पार्टी के लोगों को ही इस कानून के अन्तर्गत गिरफ्तार कर डाला। फल यह हुआ कि समाजवादी पार्टी हार गई और कांग्रेस जीत गई।

श्री बेलीराम दास (बारपेटा) : यह बिल्कुल ग़लत है। कोई समाजवादी नहीं पकड़ा गया।

श्री सारंगधर दास : आप अन्तर्बाधा न डालें । बाद में आप मेरी बातों का उत्तर दे सकते हैं ।

इसी प्रकार मजदूर संघ आन्दोलन में भाग लेने वालों के साथ व्यवहार किया जा रहा है । बम्बई में इस समय मजदूर संघ के चार पांच नेताओं को नज़रबन्द कर रखा है । बम्बई पोतघाट कर्मचारी संघ के मंत्री डी मैलो को अभी तक नज़रबन्द कर रखा है । वह हमारे दल की ओर से उस क्षेत्र के लिये उम्मीदवार था । परन्तु उसे अगस्त के महीने में ही ग़ायब कर दिया गया और अभी तक वह जेल में है । जहां कहीं भी सरकार देखती है कि उसके पिट्ठू संघों के विरुद्ध कोई व्यक्ति दूसरा मजदूर संघ संगठित करने का प्रयत्न कर रहा है वहीं वह उसे इस कानून के अन्तर्गत पकड़ लेती है । मैं पूछता हूं उस व्यक्ति पर मुक़दमा क्यों नहीं चलाया जाता ? इसीलिये मैं कहता हूं कि इस कानून के द्वारा सरकार सारे विरोधी दलों का, चाहे वह कम्युनिस्ट हों चाहे हिन्दू महासभा चाहे समाजवादी, दमन करना चाहती है । उड़ीसा में भी ऐसा ही हुआ जिस समय की घटना मैं सुना रहा हूं उस समय निवारक निरोध अधिनियम नहीं था, इसकी जगह कुछ राज्यों में सार्वजनिक व्यवस्था अधिनियम लागू था । उड़ीसा में इस अधिनियम को एक समाजवादी कार्यकर्ता पर लागू किया गया जब वह आदिवासियों से मिलने वहां गया । उसको यह आदेश दिया गया कि वह अपना सारा कार्यक्रम पुलिस सुपरिन्टेन्डेन्ट को बताये और जहां कहीं भी आये जाये उसकी सूचना देता रहे । यह भी निवारक निरोध की तरह का एक अधिनियम था जिससे विरोधी पक्ष को कुचल डालने का प्रयत्न किया जा रहा था । सौभाग्य से उस कार्यकर्त्ता पर इस आदेश के जारी होने के समय मैं भी वहां पहुंच गया था । ऐसा कहा गया कि आदिवासी लोग बड़ी जल्दी भड़क उठते हैं इसलिये वहां कोई पार्टी प्रचार नहीं होना चाहिये । परन्तु मेरा अनुभव कुछ दूसरा ही है । वे बहुत शान्तिप्रिय और सीधे लोग हैं । एक गांव में इस समाजवादी कार्यकर्त्ता ने एक पाठशाला खोलने में बड़ी सहायता की । जब इस स्कूल के लिये मिट्टी की एक छोटी सी इमारत बनवाई जाने लगी तो पुलिस वालों ने उन्हें रोक दिया और कहा कि सरकार इन सीधे और भोले-भाले लोगों के लिये स्कूल बनवाने की अनुमति नहीं देती । तो आपने देखा कि स्थिति किस प्रकार की है । एक ओर तो शिक्षा मंत्री जी शिक्षा का प्रचार करने के लिये कहते हैं दूसरी ओर स्कूल खोलने के लिये मनाही कर दी जाती है । चूंकि उस स्कूल को समाजवादी खोल रहे थे इसलिये उसे नहीं बनवाने दिया गया । इस तरह के मैं आपको कई उदाहरण दे सकता हूं । यह सब उड़ीसा सार्वजनिक व्यवस्था आदेश के अन्तर्गत किया गया था जो निवारक निरोध अधिनियम की तरह का एक कानून था ।

प्रथम तो हम इस विधेयक के ही विरुद्ध हैं परन्तु यदि इसे लागू करना ही है तो हम चाहते थे कि इसे कम अवधि के लिये लागू किया जाये जिससे संसद् को समय समय पर सारी स्थिति का ज्ञान कराया जाता रहे । ऐसा न करके इसकी अवधि १९५४ के अन्त तक कर दी गई है । इस कानून के ज़रिये भारत सरकार कम्युनिस्टों को दबाने के बहाने सारे विरोध का गला घोंटना चाहती है । यदि हमारे देश में कहीं कही जैसे आन्ध्र प्रदेश में या तेलंगाना में कुछ गड़बड़ हो रही है तो उसके लिये हमारे अधिकारी और हमारी पुलिस भी उत्तरदायी है । हमारी पुलिस की कार्यकुशलता बहुत अधिक गिर गई है । अंग्रेज़ों के ज़माने में पुलिस बहुत तेज़

[श्री सारंगधर दास]

और चतुर थी परन्तु अब उसकी दशा बिगड़ती जा रही है । लायक अली का मामला इसका सबूत है । पुलिस की इस कमज़ोरी को छिपाने के लिये निवारक निरोध जैसा कानून लागू किया जा रहा है, जिससे कि जो भी सरकार का थोड़ा सा विरोध करे उसे पकड़ा जा सके ।

समाजवादी दल शान्तिप्रिय आन्दोलन में विश्वास करता है । तो फिर इस दल के लोगों को जो कम्युनिस्टों की भांति हिंसात्मक कार्यवाही नहीं करते, क्यों नज़रबन्द किया जा रहा है । यह एक बहुत अनुचित बात है । हमने प्रवर समिति में बहुत से संशोधन रखे थे परन्तु सब के सब नामंजूर कर दिये गये । आप स्वयं सोचिये क्या भारत में हैदराबाद और सौराष्ट्र को छोड़ कर, ऐसी स्थिति है जिसके लिये इस कानून का लगाया जाना आवश्यक हो । अतः सरकार को चाहिये कि केवल इन दो राज्यों में ही इस कानून को लागू करे ।

स्वामी रामानन्द तीर्थ (गुलबर्गा) : मैं इस विधेयक के सिद्धान्त पर तो बोलना नहीं चाहता क्योंकि इसे पहले ही स्वीकार किया जा चुका है । मैं इस विषय में केवल अपने कुछ विचार आपके सामने रखूंगा ।

कुछ माननीय सदस्यों ने यह कहा कि यह क़ानून विरोधी दल को कुचल देने के इरादे से बनाया जा रहा है । यह एक ग़लत बात है । हम इतने नीच नहीं जो यह सोचें कि विरोधी पक्ष के लोगों को हमेशा दबाये ही रखा जाये । हम समझते हैं कि कोई भी प्रजातन्त्रात्मक शासन उस समय तक प्रभावी रूप से नहीं चल सकता जब तक वहां कोई विरोधी पक्ष न हो । यह कहना भी गलत है कि यह कानून केवल कम्युनिस्टों को दबाने के लिये है । इस क़ानून का उद्देश्य केवल यही है कि समस्त ऐसे तत्वों को नष्ट कर दिया जाये जो हिंसा में विश्वास रखते हों और जो अपने उद्देश्यों की पूर्ति के लिये मार-धाड़ का सहारा लेते हों । माननीय श्री सारंगधर दास ने कहा कि यह अधिनियम समाजवादियों को कुचलने के लिये काम में लाया जाता है और लाया जायेगा । उनका यह डर निराधार है । किसी भी सरकार के लिये यह सोचना सबसे बड़ी भूल है कि वह संगीनों और बन्दूकों से किसी राजनैतिक दल को कुचल सकेगी । संगीनों से आप विचार धाराओं को या सिद्धान्तों को नहीं बदल सकते । हम जानते हैं कि यदि हमें प्रजातन्त्रात्मक शासन क़ायम रखना है तो हमें साधारण जनता की आर्थिक दशा सुधारनी होगी । परन्तु हमें यह भी देखना चाहिये कि इस समय हमारे यहां की स्थिति कैसी है । मैं यह कह सकता हूं कि स्थिति अभी तक ठीक नहीं है और इसके लिये इस कानून का होना इस समय बहुत ज़रूरी है । हमारे यहां कुछ लोग ऐसे हैं जो यह सोचते हैं कि वे हिंसा द्वारा सामाजिक अथवा आर्थिक परिवर्तन ला सकते हैं । उनकी यह विचार-धारा बिल्कुल ग़लत है । हर कार्य के करने के लिये कुछ प्रजातंत्रात्मक पद्धतियां होती हैं । यदि उनका अनुसरण किया जाये तो फिर इस क़ानून की कोई आवश्यकता नहीं रह जाती । परन्तु ऐसा नहीं हो रहा है । लोग दूसरी दिशा में कार्यवाही करते हैं जिसके कारण यह क़ानून ज़रूरी हो जाता है ।

मैं माननीय गृह मंत्री से कहूंगा कि विरोधी पक्ष के सदस्यों में इस क़ानून के बारे में जो डर है वह कुछ इसलिये भी है कि कहीं कहीं इस क़ानून का दुरुपयोग किया गया है । अतः हमारा यह कर्त्तव्य है कि इस प्रकार

के डर को दूर करें और उन सदस्यों को विश्वास दिलायें कि यह क़ानून किसी राजनैतिक दल के विरुद्ध नहीं बनाया जा रहा है। मैं मानता हूं कि यह एक असाधारण क़ानून है परन्तु इस समय इसकी बहुत आवश्यकता है।

श्री शेषगिरि राव : भारत के संविधान के अन्तर्गत नज़रबन्द को चार मौलिक अधिकार दिये गये हैं।

(१) उसे मंत्रणा पर्षद् के सामने जांच करवाने का अधिकार होगा (२) उसे नज़रबन्दी के कारण यथाशीघ्र बताये जायेंगे (३) अभ्यावेदन करने के लिये उसे शीघ्रातिशीघ्र अवसर दिया जायेगा और (४) निरोध की अधिकतम अवधि अधिनियम में दी जानी चाहिये। इस निवारक निरोध अधिनियम की एक ख़ास बात यह है कि इस में वही शब्द दिये गये हैं जो संविधान के अनुच्छेद २२ (५) में हैं। अनुच्छेद २२ (५) के अनुसार :

> "निवारक निरोध उपबन्धित करने वाली किसी विधि के अधीन दिये गये आदेश के अनुसरण में जब कोई व्यक्ति निरुद्ध किया जाता है तब आदेश देने वाला प्राधिकारी यथाशक्य शीघ्र उस व्यक्ति को जिन आधारों पर वह आदेश दिया गया है, जन को बतायेगा तथा उस आदेश के विरुद्ध अभ्यावेदन करने के लिये उसे शीघ्रातिशीघ्र अवसर देगा।"

अधिनियम की धारा ७ में भी यही शब्द रखे गये हैं। संविधान का अभिप्राय तो यह है कि कुछ न कुछ समय-अवधि अवश्य होनी चाहिये जिससे अधिकारी यह न कह सकें कि उचित अवधि एक महीना है या दो महीने। प्रवर समिति ने ठीक ही यह फ़ैसला किया है कि पांच से अधिक दिन नहीं दिये जाने चाहियें। नज़रबन्द को अभ्यावेदन करने का शीघ्रातिशीघ्र अवसर दिया जाना चाहिये। मैं जानना चाहता हूं कि उसे क्या अवसर दिया जायेगा ? क्या उसे केवल एक पेंसिल और कागज़ पकड़ा दिया जायेगा या उसे राज्य सरकार के सामने उपस्थित किया जायेगा ? संविधान के अन्तर्गत, एक नज़रबन्द का सबसे महत्वपूर्ण अधिकार यही है कि उसे शीघ्र से शीघ्र राज्य सरकार को अभ्यावेदन करने तथा मंत्रणा पर्षद् के सामने उपस्थित होने दिया जाये। यह चीज़ धारा ७ में ठीक तरह नहीं दी गई है और उन्हीं शब्दों यानी "शीघ्रातिशीघ्र अवसर" का प्रयोग किया गया है। क्या यह एक महीना है या दो महीने ? विशेष तौर पर जब आदेश के बाद १२ दिन निर्देश करने के लिये दिये जायेंगे तो उसे राज्य सरकार के सामने अभ्यावेदन करने का शीघ्रातिशीघ्र अवसर मिलना चाहिये।

नज़रबन्द द्वारा वकील करके मुक़दमा लड़ने की बात का मैं समर्थन नहीं कर सकता। जब तक संविधान में परिवर्तन नहीं होता, ऐसा करना संभव नहीं।

विधेयक में एक नया उपबन्ध यह है कि जब तक नये आधार नहीं हों, किसी व्यक्ति को फिर से नज़रबन्द नहीं किया जा सकता। परन्तु उस समय क्या स्थिति होगी जब किसी व्यक्ति के नज़रबन्द रहते हुए कुछ नई बातों का पता चले ? क्या उन बातों के आधार पर उसे फिर से नज़रबन्द किया जा सकता है ? मैं इस का स्पष्टीकरण करना चाहता हूं।

श्री आल्तेकर (उत्तर सतारा) : आज हमारे देश की स्थिति इस प्रकार की है कि निवारक निरोध अधिनियम का लागू किया जाना बहुत ज़रूरी है। इस क़ानून को

[श्री आल्तेकर]

प्रवर समिति में पहले ही यथासम्भव उदार बनाया जा चुका है और अब जो कुछ उपबंन्ध किये गये हैं वे परिस्थितियों को देख कर ही किये गये हैं । विरोधी पक्ष के सदस्य कहते हैं कि नज़रबन्द को वकील करने का अधिकार होना चाहिये और सरकार के पास जो भी जानकारी हो वह नज़रबन्द को दी जानी चाहिये । तो इसका मतलब यह है कि जिस तरह साधारणतः एक मुक़दमा चलता है उसी तरह यह भी चले । परन्तु क्या आजकल की स्थिति में इस प्रकार की सुविधा देना ठीक है ।

विरोधी दल के सदस्यों का यह डर निराधार है कि इस कानून को राजनैतिक दलों का दमन करने में काम में लाया जायेगा । आप देखेंगे कि इस समय देश में समाज विरोधी तत्वों ने कुछ इस प्रकार का तरीक़ा अपना रखा है जिससे अपराधियों को पकड़ना बहुत कठिन हो गया है । साधारण कानूनों द्वारा शान्ति और व्यवस्था बनाये रखना असंभव सा हो गया है । बम्बई राज्य के कुछ भागों में गांव वाले इन आतंकवादियों से परेशान हो गये हैं । कठिनाई तो तब होती है जब यह कहा जाता है कि गवाह पेश किये जायें । गांव वाले इतना डरे हुए हैं कि वे इन लोगों के विरुद्ध गवाही देने से घबराते हैं । इन लोगों के पास बिना लाइसेंस के हथियार हैं और यह एक जत्था बना कर लूट मार करते हैं । ये लोग जिन्हें अपना शिकार बनाते हैं उनके टुकड़े टुकड़े करके नदी में फेंक देते हैं ताकि उनके खिलाफ़ किसी सबत का निशान तक न रहे । बिचारे गांव वालों में इनके विरुद्ध बोलने की हिम्मत नहीं होती । हमें इन लोगों को ठीक करना है, इस समाज विरोधी तत्व को समाप्त करना है और इन्हीं के लिये यह क़ानून बनाया गया है यदि ऐसे लोगों के लिये गवाही का उपबन्ध होगा तो इनको दंड देना बड़ा कठिन हो जायेगा । कोई व्यक्ति इनके विरुद्ध गवाही नहीं देगा । मैं किसी राजनैतिक दल की ओर निर्देश नहीं कर रहा । मैं केवल उन लोगों के लिये कह रहा हूं । जो हर समय समाज के लिये ख़तरा हैं । बम्बई राज्य में हमें इसका अनुभव है । मेरे कहने का अभिप्राय यह है कि जब तक ऐसा क़ानून नहीं बनता देश में शान्ति एवं व्यवस्था नहीं रह सकती । वास्तव में लोगों को यह शिकायत नहीं है कि यह अधिनियम क्यों बनाया जा रहा है, उनकी शिकायत तो यह है कि इसका समाज-विरोधी तत्वों के खिलाफ़ ठीक तरह से प्रयोग नहीं किया जा रहा है । लोग हम से कहते हैं कि यदि आप इन्हें नहीं पकड़ सकते तो आप शासन की बागडोर किसी और के हवाले कीजिये । वे कहते हैं कि ये लोग हममें और आप में ही मिले रहते हैं । इनका पहचानना कठिन होता है । तो इस प्रकार की परिस्थिति में, सरकार के पास इस कानून को लागू करने के अलावा कोई और चारा नहीं । यही एक प्रभावी तरीक़ा है जिससे व्यवस्था कायम की जा सकती है ।

विधेयक को देखने से हमें पता लगता है कि प्रवर समिति द्वारा विचार होने के बाद हमने इसमें विरोधी पक्ष की मांगों के अनुसार चार रियायतें दी ह । प्रारंभ में धारा ७ को संशोधित करने का विचार नहीं था ; अब विरोधी दल की मांग के अनुसार हमने उसमें पांच दिन की अधिकतम अवधि का उपबन्ध कर दिया है । फिर धारा ८ के बारे में यह पूछा गया कि मंत्रणा पर्षद् की रचना क्या है ।

उपाध्यक्ष महोदय : माननीय सदस्य अपना भाषण मध्यान्ह पश्चात् जारी रखें ।

राज्य परिषद् सन्देश

सचिव महोदय : मुझे राज्य परिषद् के सचिव महोदय से प्राप्त दो संदेशों की सूचना देनी है :

"(१) मुझे लोक सभा को सूचित करना है कि राज्य परिषद् ने अपनी ३१ जुलाई १९५२ की बैठक में राज्य सशस्त्र आरक्षी बल (विधियों का विस्तार) विधेयक, १९५२ को, जिसे लोक सभा ने अपनी १५ जुलाई १९५२ की बैठक में पारित किया था, बिना किसी संशोधन के स्वीकार कर लिया है ।"

(२) मुझे लोक सभा को सूचित करना है कि दंड प्रक्रिया संहिता (द्वितीय संशोधन) विधेयक, १९५२ को, जिसे लोक सभा ने अपनी ११ जुलाई १९५२ की बैठक में पारित किया था, राज्य परिषद् ने अपनी ३१ जुलाई १९५२ की बैठक में निम्न संशोधन के साथ पारित कर दिया है :

कि विधेयक के खंड ७ में मूल अधिनियम की प्रस्तावित धारा १३२ ए के खंड (क) के अन्त में शब्द "so operating" (इस प्रकार प्रवर्तित) जोड दिये जायें ।

अतः मैं विधेयक को इस प्रार्थना के साथ भेज रहा हूं कि उक्त संशोधन के बारे में लोक सभा की सहमति परिषद् के पास भजी जाये ।"

दंड प्रकिया संहिला (द्वितीय संशोधन) विधेयक

सचिव महोदय : श्रीमान्, मैं सदन पटल पर दंड प्रक्रिया संहिता (द्वितीय संशोधन) विधेयक, १९५२ रखता हूं जिसे राज्य परिषद् ने एक संशोधन के साथ वापस भजा है ।

रक्षित तथा सहायक वायु-सेना विधेयक

संयुक्त समिति की रिपोर्ट का प्रस्तुत किया जाना

रक्षा मंत्री (श्री गोपालस्वामी) : मैं उस विधेयक के लिये स्थापित संयुक्त समिति की रिपोर्ट प्रस्तुत करता हूं जिस में कुछ रक्षित वायु सेना तथा साथ ही कुछ सहायक वायु सेना की रचना और विनियमन की तथा इससे सम्बंधित अन्य मामलों की व्यवस्था की गई है ।

इसके पश्चात् सदन की बैठक साढे तीन बजे तक के लिये स्थापित हो गई ।

सदन की बैठक साढे तीन जे पुनः समवेत हुई ।

[**अध्यक्ष महोदय** अध्यक्ष-पद पर आसीन थे ।]

निवारक निरोध (द्वितीय संशोधन) विधेयक—जार

श्री आल्तेकर : मैं आपसे धारा ८ के बारे में कह रहा था । अब जो संशोधन किया गया है उसके अनुसार सम्बंधित सरकार के लिये यह आवश्यक है कि वह मंत्रणा पर्षद् के अध्यक्ष-पद पर उच्च न्यायालय के किसी न्यायाधीश को नियुक्त करे । भाग 'ग' राज्य के बारे में, किसी भाग 'क' या भाग 'ख' राज्य के किसी उच्च न्यायालय के न्यायाधीश को सम्बन्धित राज्य सरकार की सहायता से मंत्रणा पर्षद् का अध्यक्ष बनाया जायेगा ।

श्री ए० के० गोपालन : चूंकि हम एक [illegible] र्णविधेयक पर बहस कर रहे हैं, इसलिये मेरा सुझाव यह है कि सदन की बैठक दो मिनट तक स्थगित कर दी जाये ताकि सरकार की ओर से तब तक कोई सदस्य आ सके । इस समय एक भी मत्री मौजूद

[श्री ए० के० गोपालन]

नहीं है। इस से ऐसा प्रगट होता है कि वे हमारी बातों को सुनना तक नहीं चाहते।

अध्यक्ष महोदय : मैं भी अभी यही कहने जा रहा था कि किसी भी मंत्री के लिये सदन के कार्य के अतिरिक्त और कोई कार्य महत्वपूर्ण नहीं हो सकता। उनको इस बात का ध्यान रखना चाहिये कि बाहर चाहे कितना ही जरूरी काम हो, सदन में उनकी मौजूदगी उससे कहीं अधिक जरूरी है। बीमारी या अन्य आकस्मिक कठिनाइयों की बात दूसरी है पर कहीं और व्यस्त होने की बात कहना इस सदन के प्रति उचित ध्यान न देना होगा।

श्री आल्तेकर : तो मैं आपको बता रहा था कि धारा ८ में बहुत महत्वपूर्ण संशोधन किया गया है। यह कहना गलत होगा कि मूल अधिनियम में कोई विशेष परिवर्तन नहीं किया गया है।

इसके बाद धारा ९ को लीजिये। इसमें यह संशोधन किया गया है कि संबन्धित सरकार किसी व्यक्ति को नजरबन्दी के तीस दिन के अन्दर मंत्रणा पर्षद् के सामने नजरबन्दी के आधार प्रस्तुत करेगी और यदि उसने कोई अभ्यावेदन किया है तो उसे भी प्रस्तुत करेगी। यदि निरोध आदेश किसी अधिकारी द्वारा जारी हुआ है तो उसकी रिपोर्ट भी मंत्रणा पर्षद् को भी उसी अवधि के अन्दर भेजी जायेगी। पहले यह समय अवधि ६ सप्ताह थी। इसे अब ३० दिन कर दिया गया है। इसका परिवर्तन यह है कि अधिकारी की रिपोर्ट के साथ साथ उन सारे कागजों को भेजना भी जरूरी है जो पहले नहीं भेजे जाते थे। यह एक अत्यन्त महत्वपूर्ण संशोधन ह। धारा १० की उपधारा (३) के बारे में मैं एक बात कहूंगा। इस में जो शोधन हुआ है उसके अनुसार नजरबन्द अपनी सफाई पेश करने के लिये वकील नहीं कर सकता। परन्तु यदि मंत्रणा पर्षद् की राय में नजरबन्द के लिये कानूनी सहायता आवश्यक है तो वह वकीलों के बजाय किसी अवकाश प्राप्त न्यायाधीश की या अन्य किसी व्यक्ति की सहायता ले सकता है जो कानूनी मामलों में उसकी मदद कर सके। यह भी एक महत्वपूर्ण संशोधन है।

तो आप देखेंगे कि ये संशोधन नजरबन्द को काफी रियायतें देते हैं। आज देश में जो स्थिति है उसको देखते हुए इस कानून का होना बहुत आवश्यक है। इसे काला कानून कहना केवल एक ओर की बात कहना है। हमें सारे देश की परिस्थितियों को ध्यान में रखना चाहिये। इस कानून को इससे अधिक उदार नहीं बनाया जा सकता।

श्री नम्बियार : आरंभ में हम आशा करते थे कि सरकार इस कानून को वापस ले लेगी। परन्तु सरकार ने या नी बहुसंख्यक दल ने ऐसा नहीं किया। हमसे कहा गया कि मूल अधिनियम पर भी बिचार किया जायेगा और उस में सदस्यगण चाहें तो संशोधन कर सकते हैं। विमति टिप्पणियों से हमें पता चलता है कि मूल अधिनियम पर गंभीरतापूर्वक विचार नहीं हुआ है और उसमें नाम मात्र के ही संशोधन किये गये हैं जसे मंत्रणा पर्षद् को मामला भेजने के लिये अवधि ४२ दिन से घटा कर ३० दिन कर दी गई है। कोई विशेष परिवर्तन उसमें नहीं हुए हैं। हमारा सरकार से अब भी यही कहना है कि इस घृणित विधेयक को वापस ले लिया जाये।

इस कानून में बहुत कुछ बातें अस्पष्ट हैं और उनके आधार पर अधिकारीगण अथवा सरकार अपनी मनमानी कर सकते हैं। "भारत की सुरक्षा" अथवा "विदेशों से संबन्ध" शब्द बहुत व्यापाक हैं और इनके

अधीन सरकार किसी भी व्यक्ति को पकड़ सकती है। मैं आपको कई उदाहरण दे सकता हूं जिन में लोगों को बहुत ही मामूली बातों पर पकड़ लिया गया है। फिर इस में "आवश्यक प्रदायों और सेवाओं को बनाये रखने" की बात है। मेरा रेलवे के मजदूर आन्दोलन से बहुत पुराना संबन्ध है अत: मैं इस पर अधिकृत रूप से बोल सकता हूं। सन् १९४७ के बाद से अब कभी भी रेलवे वालों ने कोई कार्य-वाही करनी सोची तब ही सब से पहले मुझे गिरफ्तार कर लिया जाता था। चाहे वह कार्यवाही भारत के किसी भाग म हो, वे लोग मुझे पकड़ लेते थे और नजरबन्द कर देते थे। मुझे नजरबन्द ही नहीं किया जाता था वरन् जेलों में मेरे साथ बड़ी बुरी तरह व्यवहार किया जाता था। मेरा एक हाथ बेल्लोर सेन्ट्रल जेल में टूटा था। जेल में दैनिक भत्ते के सिलसिले में हमने भूख हड़ताल की थी ; इसी मामले में हम पर लाठी चार्ज किया गया जिसमें मेरा यह हाथ टूटा था ।

आज आप फिर उसी कानून को लागू करने जा रहे हैं। विरोधी दल का हर व्यक्ति इस कानून के खिलाफ है क्योंकि वह जानता है कि इसे विरोधी पक्ष का गला घोंटने के काम में लाया जायगा। म कांग्रेस के लोगों को चुनौती देता हूं कि वे इस कानून को लेकर जनता के सामने जायें और वोट मांग। यदि इस पर वे जीत जाते हैं तो मैं त्याग पत्र देने को तय्यार हूं परन्तु यदि वे हार गये तो क्या वे लोग त्याग पत्र दे देंगे ?

जब मैं वेल्लोर सेंन्ट्रल जेल में था तो मैं मद्रास विधान सभा के अध्यक्ष महोदय को एक पत्र भेजना चाहता था। परन्तु इस पत्र को उन तक पहुंचाने से इन्कार कर दिया गया। मैंने उस पत्र में अध्यक्ष महोदय से विधान सभा की बैठकों में उपस्थित होने की प्रार्थना की थी। परन्तु इस पर भी आपत्ति की गई और वह पत्र उनको नहीं दिया गया। इस मामले को मैं मद्रास उच्च न्यायालय तक ले गया। वहां से इस बात पर कड़ा आश्चर्य प्रकट किया गया और यह आदेश मिला कि मेरे सारे पत्र आदि अध्यक्ष महोदय के पास पहुंचाये जायें। आप दखते हैं कि किस प्रकार इस कानून को काम में लाया जाता है ।

डा० काटजू कहते हैं कि नज़रबन्दों के साथ जेल में पूरी नम्रता और शिष्टता से व्यवहार होता है। मैं उनसे कहता हूं कि वह ज़रा एक महीने जेल में रहें और फिर देखें कि ऊपर क्या गुज़रती है। इस सम्बन्ध में प्रवर समिति द्वारा दिये गये बहुत से सुझाव ठुकरा दिये गये। कम से कम आप उन्हें खाना तो अच्छा दीजिये। जेल में उनके रहने की हालत को तो बनाइये ।

तीसरी चीज़ मैं विधान सभाओं या संसद् के सदस्यों की गिरफ्तारी के बारे में कहूंगा। इस बारे में मैंने एक संशोधन भी दिया था कि सारे संसद् सदस्यों के लिये यह संरक्षण हो कि उन्हें गिरफ्तार न किया जाये। यदि उन्हें गिरफ्तार किया भी जाये तो कम से कम संसद् का सत्र होते समय उन्हें संसद् में आने की अनुमति होनी चाहिये। मेरा तीसरा सुझाव यह था कि इन लोगों को गिरफ्तार करते समय संबन्धित गृह मंत्रियों के आदेश अवश्य होने चाहिये। उदाहरणत: यदि मद्रास विधान के सदस्य को गिरफ्तार किया जाये तो मद्रास राज्य के गृह मंत्री का आदेश होना चाहिये और यदि संसद् के सदस्य को गिरफ्तार किया जाये तो वह संघ के गृहमंत्री के आदेश से होना चाहिये। प्रवर समिति में मेरे इस सुझाव को भी नामंजूर कर दिया। इंग्लैंड में नियम १८ बी के अन्तर्गत पार्लियामेंट के सदस्य को केवल गृह मंत्री के आदेश से ही गिरफ्तार किया

[श्री नम्बियार]

जा सकता था। यहां भारत में हम लोगों को वही अधिकार दिये गये हैं जो ब्रिटिश लोक सभा के सदस्यों को प्राप्त हैं परन्तु इस विशेष मामले में हमें यहां का कोई सा ज़िला मजिस्ट्रेट गिरफ्तार कर सकता है। यह दो परस्पर विरोधी बातें नहीं होनी चाहियें। इससे हमारे सारे अधिकार व्यर्थ हो जाते हैं। इंग्लैंड में यह नियम युद्ध-काल में लागू हुआ था, परन्तु भारत में इसे बिना किसी संकट स्थिति के होते हुए भी प्रयोग में लाया जा रहा है। हां, यह बात दूसरी है कि हमारे खिलाफ़ यह आरोप हो कि तुम राज्य की सुरक्षा को ख़तरा पहुंचा रहे, इसलिये तुम्हें अमुक नियम के अन्तर्गत गिरफ्तार किया जाता है। जब इस प्रकार का कोई आरोप नहीं तो फिर एक ज़िला मजिस्ट्रेट को हमें गिरफ्तार करके जेल में ठूंसने का अधिकार क्यों दिया जा रहा है ?

यदि हमें गिरफ्तार किया भी जाये तो हमें संसद् की बैठकों में भाग लेने की मनाही नहीं होनी चाहिये। आखिर हम जब नज़रबन्द थे तो उच्चतम न्यायालय में हमें लाया जाता था। बाहर पुलिस रहती थी और सुनवाई के बाद हम फिर पुलिस की गाड़ी में चल देते थे। तो इसी प्रकार संसद् में भी हमें आने की अनुमति होनी चाहिये। हम जनता के प्रतिनिधि हैं और जनता की आवाज़ को आपके कानों तक पहुंचाने के लिये हमें क्यों रोका जाये ? संसद् में अपने विचार प्रकट करने का हमें अधिकार है और नियमों के अन्दर रहते हुए हम यहां कुछ भी कह सकते हैं। संसद्-सदस्य को यहां पुलिस की निगरानी में लाया जा सकता है परन्तु उनको संसद में बोलने से रोकना सर्वथा अनुचित है। यह संविधान में निहित जनता के अधिकारों के विरुद्ध होगा। जब जनता के प्रतिनिधियों को यहां बोलने से मना किया जायेगा तो इसे जनता का शासन कैसे कहा जा सकता है। अतः मेरा अनुरोध है कि विधान सभाओं या संसद् के सदस्यों को यदि गिरफ्तार किया भी जाये तो उन्हें कम से कम वहां की कार्यवाहियों में भाग लेने का अधिकार अवश्य मिलना चाहिये। सबसे पहिले तो हम यही संरक्षण चाहते हैं कि उन्हें गिरफ्तार ही न किया जाये, परन्तु यदि किया जाये तो उन्हें बैठकों में आने का अधिकार अवश्य दिया जाना चाहिये। यही मेरा निवेदन है और इसके साथ साथ मैं इस विधेयक का घोर विरोध करता हूं और एक बार फिर अपील करता हूं कि इसे वापस ले लिया जाये।

पंडित मुनीश्वर दत्त उपाध्याय (ज़िला प्रतापगढ़—पूर्व) : जो विधेयक इस समय हमारे सामने उपस्थित है उस के संबंध में उन माननीय सदस्यों के अतिरिक्त जो इस के सिद्धान्त के विरुद्ध ही विश्वास करते हैं और जिन्होंने अपनी बहस इसके भी सिद्धान्त के विरुद्ध की है उन के अतिरिक्त और जितने सदस्यों ने इस विषय पर अब तक इस सदन के सामने जो कुछ पेश किया है, उन्हें मैं जहां तक समझ सका हूं, एक विषय बड़े महत्व का है। प्रायः सभी सदस्यों ने यह तो स्वीकार किया है कि जहां तक होम मिनिस्टर का ताल्लुक है, चाहे वह हमारे केन्द्रीय सरकार के हों और चाहे वे प्रदेशीय सरकार के हों उनसे यह आशा नहीं की जाती है कि वे कोई ऐसी बड़ी गलती करेंगे या इस कानून का दुरुपयोग करेंगे और जहां तक ऐडवाइजरी बोर्ड (मंत्रणा पर्षद्) का सम्बन्ध है उसके विषय में भी मुझे ऐसा सुनने में नहीं आया कि किसी को, चाहे इस पक्ष के हों, चाहे विपक्ष के हों, किसी सदस्य को कोई संगीन शिकायत हो। मेरी समझ में ऐडवाइजरी बोर्ड के सम्बन्ध में तो कोई भी शिकायत नहीं

होगी। तो शिकायत जो है वे प्रायः जिला मजिस्ट्रटों के या उन के नायब जिला मजिस्ट्रेट जो होते हैं, उन के सम्बन्ध में तो सुनी गयी और जितना बड़ा खतरा इस कानून से बताया गया है वह प्रायः इसी सम्बन्ध में था कि ऐसे अफ़सरों के हाथ में इस कानून को डाल देना जो उस का दुरुपयोग करें गलत होगा। जितने केसेज (मामले) भी हमारे सामने पेश किये गये इन सब का अर्थ यही होता है चाहे वह एक हो या हजार हों इन सब का अर्थ यही होता है कि इस कानून का दुरुपयोग उन अफसरों के द्वारा किया जा रहा है जिन के ऊपर लागू करने के लिये यह कानून छोड़ दिया जाता है। तो ऐसी स्थिति में विशेष रूप से हमारा एतराज उन के अतिरिक्त---जैसे मैं ने पहले निवेदन किया जो कि सिद्धान्त के खिलाफ ही विश्वास करते हैं या बहस करते हैं उन के अतिरिक्त---सब से बड़ी एतराज की बात, सब से बड़ी आपत्ति जो हमारे साथियों को हुई है वह यह है कि अफसरों के द्वारा इस कानून का दुरुपयोग हो सकता है जैसा भूतकाल में होता आया है मैं इस से बिल्कुल असहमत नहीं हूं। यह हो सकता है कि कहीं कहीं दुरुपयोग भी हो और यह भी हो सकता है कि भूत काल में दुरुपयोग हुए हों। बहुत से केसेज ऐसे बताये गये जिन में लोगों ने अपनी आत्म कथा बयान की, जीवनचरित्र के सब किस्से सुनाये, और उस दौरान में जो बातें कही गयीं कहीं एक दो बात इधर उधर की कह करके बाकी जो और ग्राउन्ड्स (आधार) उन की गिरफ्तारी किये जाने के बारे में दी गयी थी, उन को पूरा न बता करके अधूरी बातें कीं जिसे उन से कोई दूसरे मानी निकाले जा सकें। लेकिन ज्योंही उन को वे पूरी बातें हमें मालूम हुई, तो जान पड़ा कि उन्होंने पूरी बातें नहीं बतलाई और वे बातें अधूरी थीं, उन का कोई अर्थ नहीं होता। बहुत से लोगों ने और किस्से ऐसे सुनाये जिन में जान पड़ता था कि यह जो इस तरह का हुक्म जारी हुआ है, उस से गिरफ्तारियां हुई हैं, वे बहुधा गलत थीं। दरअस्ल जैसी शक्ल इस सदन के दूसरे हिस्से से पेश की गयी है, मैं समझता हूं कि अगर जैसी शक्ल बयान की गई है, दरअस्ल वैसी ही शक्ल हो, तो किसी को भी उस कानून के साथ सहमत नहीं होना चाहिये। परन्तु देखना यह है कि इस वक्त जो कानून लागू होने जा रहा है, जो विधेयक हमारे सामने है और सिलेक्ट कमेटी से वापस आ कर जो उस की मौजूदा शक्ल रह गयी है, जो उस का रूप अब हमारे सामने हैं, उस शक्ल में वह कहां तक हानिकर हो सकती है और यह खतरा जो जिला मजिस्ट्रेट के द्वारा या किसी ऐसे लापरवाह या अन्यायी अफसर के द्वारा हम पर आ सकता है, वह कहां तक हमारे ऊपर लागू हो सकेगा। मैं आप से निवेदन करूं कि अब इन तरमीमात और संशोधनों के बाद जो सिलेक्ट कमेटी में इस कानून में हुए हैं और वहां से जिस प्रकार निकल कर अब हमारे सामने आया है, उस में जिला मजिस्ट्रेट का या नायब मजिस्ट्रेट का क्या अधिकार रह गया है। अब उस को केवल इतना ही अधिकार है कि किसी शख्स के जिस को वह समझे कि वह ऐसी वेउनवानियां कर रहा है और जिस पर यह कानून लागू होता है तो वह उसके विरुद्ध गिरफ्तारी का हुक्म निकाल सकता है। गिरफ्तारी का हुक्म निकालने के बाद ही उस की गिरफ्तारी हो सकती है। एक रोज बाद हो, दो रोज बाद हो, मुमकिन है आठ रोज बाद हो, दस रोज बाद हो और यह भी मुमकिन हो सकता है कि पन्द्रह रोज तक न हो। इस कानून में जो मियाद रक्खी गयी है वह यह रक्खी गयी है कि अगर उस के हुक्म निकलने के बारह रोज के अन्दर अन्दर प्रदेशीय सरकार का हुक्म नहीं हो जाता है कि यह जो गिरफ्तारी हुई है, वह नियमित है, मुनासिब है

[पंडित मुनीश्वर दत्त उपाध्याय]

और उस को डिटेंशन (निरोध) में रहना चाहिये तो वह व्यक्ति बावजूद उस डिस्ट्रिक्ट मजिस्ट्रेट के हुक्म के बरी कर दिया जायगा ।

आप गौर करें। माननीय मंत्री जी ने आप को बताया कि १२ दिन की मियाद है। मैं और भी इसे साफ करना चाहता हूं। जैसा मैं ने शब्दों को पढ़ कर अर्थ लगाया है उस से मैं समझता हूं कि चाहे कोई हुक्म गिरफ्तारी का हो मजिस्ट्रेट द्वारा तो उस गिरफ्तारी के हुक्म के १२ दिन के अन्दर वह हुक्म प्रदेशीय सरकार द्वारा स्वीकार हो जाना चाहिये और अगर प्रदेशीय सरकार उस की ताईद करती है तब तो वह हुक्म रहता है और अगर प्रदेशीय सरकार उस हुक्म को मंसूख कर दे तो वह हुक्म नहीं रह सकेगा और वह इन्सान जिस के सम्बन्ध में वह हुक्म है, अगर वह उस वक्त तक गिरफ्तार नहीं हुआ है तो वह गिरफ्तार नहीं किया जायगा, और अगर वह गिरफ्तार हो चुका है तो उसी दिन छोड़ दिया जायगा। तो यह कहना कि मजिस्ट्रेट को १२ दिन की मियाद मिल गई है और वह चाहे जिस को नाजायज़ तौर पर गिरफ्तार कर के बन्द रख सकता है, मैं समझता हूं कि यह बिल्कुल सही नहीं है। १२ दिन से कम तो हर हालत में होंगे ज्यादा से ज्यादा १२ दिन हो सकते हैं, क्योंकि हुक्म जारी करने के १२ दिन के अन्दर ही ऐसा होता है। हुक्म जारी करने के माने गिरफ्तार करने के नहीं हैं। हुक्म जारी करने के बाद ही गिरफ्तारी हो सकती है चाहे वह एक दिन बाद हो या दस दिन बाद हो या १५ दिन बाद हो।

इस कानून के अन्दर का सब से बड़ा ज़हर जो हमारे साथियों को दिखाई देता है मेरी समझ में वह ज़हर तो निकल गया। मैं नहीं समझता कि कोई भी ऐसा इस सदन में होगा जो यह समझे कि जहां यकायक षड्यंत्र पकड़ना पड़ता है वहां होम मिनिस्टर मौजूद हो सकते हैं, या कोई दूसरे मिनिस्टर मौजूद हो सकत हैं चाहे वह प्रदेशीय सरकार का मामला हो या केन्द्रीय सरकार का हो वहां मिनिस्टर उपस्थित नहीं हो सकते। यह काम तो आप को स्थानीय अफसरों के द्वारा ही कराना होगा। यहां इस बात पर बहुत कुछ व्याख्या करने की आवश्यकता नहीं है। तब तक जब हम को उन अफसरान से काम कराना है तो थोड़ा सा वक्त उन के काबू में ज़रूर रहेगा, लेकिन मैं देखता हूं कि वह अब कम से कम हो गया है। ऐसी स्थिति में अब इस को बहुत खतरनाक नहीं समझा जा सकता कि अफसरान जिनके हाथ में यह अधिकार आ जायगा उन को यह मौका होगा कि वह बड़ी ज्यादती कर सकें। मैं समझता हूं कि वह ज्यादती का मौका अब इस में बहुत घटा दिया गया है। इस को अब और ज्यादा घटाने की गुंजाइश नहीं है। क्योंकि अगर इतना भी वक्त न दिया जाय तो सारा मामला प्रदेशीय सरकार के पास १२ रोज के अन्दर कैसे पहुंचेगा और कैसे उस सब पर विचार करके हुक्म दिया जा सकेगा। मैं समझता हूं कि यह समय ज्यादा नहीं है कम से कम जो समय लग सकता है वही दिया गया है। माननीय मंत्री ने आप को यह भी आश्वासन दिया है कि वह इस का प्रबन्ध करेंगे कि अगर वह केन्द्रीय सरकार का मामला हो तो केन्द्रीय सरकार के कोई मंत्री उस को देखेंगे और अगर प्रदेशीय सरकार का हो तो प्रदेशीय सरकार के एक मंत्री द्वारा वह जांचा जायगा। मैं नहीं समझता कि जैसी बातें अब तक हम करते आये हैं और जैसे व्याख्यान मैं ने सुने हैं उन को देखते हुये इस में कुछ और बहुत कसर रह जाती है। जहां तक मंत्रियों का सम्बन्ध है मैं समझता हूं

कि इस कानून का बहुत दुरुपयोग होने की सम्भावना नहीं है।

इसके अलावा ऐडवाइज़री बोर्ड की बात थी। कितने सुन्दर ऐडवाइज़री बोर्ड थे यह इसी से साफ है कि उस के खिलाफ कोई खास शिकायत नहीं है। लेकिन इस में और भी संशोधन जो हमारे साथी चाहते थे और जिन की तजवीज हमारे माननीय सदस्यों ने की थी वह भी हो गये। मैं नहीं समझता कि अब इस से भी अच्छी कोई जांच कमेटी या कोई बोर्ड हो सकता है और इस से भी अधिक न्यायोचित आधार पर हो सकता है। जैसा कि यह ऐडवाइज़री बोर्ड बना दिया गया है।

बहुत से साथियों ने यह बात भी कही कि कानून का दुरुपयोग हो ता है और जो पुलिस डिपार्टमेंट है उस के मारफत यह दुरुपयोग होता है। मेरे ख्याल में जो भाई वकील या ऐडवोकेट हैं उन से तो इस विषय में कुछ कहना ही नहीं है। और भी जितने माननीय सदस्य हैं वे भी इस को जानते हैं कि जैसा दुरुपयोग और ऐबयूजेज (दुरुपयोग) का जिक्र कुछ दोस्तों ने किया है वसे ऐब्यूज़ेज तो उस कानून के अन्दर भी होते हैं जहां गवाही होती है और ब्यान होता है और फिर जिरह होती है और बहस होती है और उसके बाद अपील और निगरानी भी होती है। तो वहां भी हम देखते हैं कि कभी कभी गलत चालान हो जाते हैं और गलत गवाही पेश की जाती है और उस गलत गवाही के अधार पर लोगों को बड़ी बड़ी सज़ायें हो जाती हैं और कभी कभी फांसी भी हो जाती है। यह कहना कि चूंकि एक आध केसेज में या दस पांच केसेज में कानून का दुरुपयोग हुआ है इस लिये न अब हम इंडियन पीनल कोड (भारतीय दंड विधान) रखेंगे और न क्रिमिनल प्रोसीड्योर कोड (दंड प्रक्रिया संहिता) रखेंगे कहां तक ठीक होगा। मैं नहीं समझता कि उस हालत में आप किस कानून से काम चलायेंगे और कैसे देश का प्रबन्ध करेंगे। क्या हम यह कह सकते हैं कि चूंकि हर एक कानून का दुरुपयोग सम्भव है इस लिये अब हम कोई कानून रखेंगे ही नहीं। तो सही बात तो यह है कि जहां तक मनुष्य का सम्बन्ध है मनुष्यों में सब तरह के मनुष्य होते हैं। चरित्र में ऊंचे भी होते हैं और नीचे भी होते हैं। इसलिये यह नहीं हो सकता कि हम बिल्कुल ही शुद्ध कानून बना सकें जिन का दुरुपयोग न हो। जहां तक सम्भव हो सकता है वहां तक इस को शुद्ध बनाने की चेष्टा की गई है।

फिर जो शख्स गिरफतार किया जायगा उस के गिरफतार होने के पांच दिन के अन्दर उस को ग्राउंड्स ज़रूर बता दिये जायेंगे। हो सके तो उसी दिन बता दिये जायें। पाँच दिन के आगे तो जा ही नहीं सकते। एक बात मैं महसूस करता हूं कि अगर उस को और ज्यादा तफसील बतलाई जाय तो वह ज़्यादा खूबी से जवाब दे सक। तो जो ऐडवाइज़री बोर्ड है उस के पास तो सब सही वाकयात, फेक्ट्स एंड सरकमस्टांसेज (तथ्य तथा परिस्थितियां) सब जाते हैं और ऐडवाइज़री बोर्ड को डिटेन्यू (नज़रबन्द) को तलब करने का और उस से सवालात करने का अधिकार है। तो सवालात के माने ही यह होते हैं कि जो मसाला उन के सामने रहेगा उसी से सवाल करके वह उस से जवाब लेंगे। तो यह सवालात करना ऐडवाइज़री बोर्ड के जिम्मे है। तो मैं नहीं समझता कि ऐसी हालत में किसी तरह का खतरा रह जाता है।

और जितनी तरमीमें इस दरम्यान में रखी गई ह, जो जो सुझाव माननीय सदस्यों की ओर से सन् ५० से ले कर अब तक आते हैं

[पंडित मुनीश्वर दत्त उपाध्याय]

करीब करीब सारे के सारे सुझाव हमारे इस कानून में आ गये हैं। और इतना साफ हो जाने के बाद इसकी शक्ल अब कोई ऐसी नहीं रह गई है कि हम इस में कोई बड़ा खतरा महसूस करें।

इस के अलावा कुछ लोगों का यह सुझाव है कि जहां इस को लागू करने को ज़रूरत हो वहां इसको लागू किया जाय। आप देखते होंगे कि जहां ज़रूरत होती है वहां गिरफ्तारी होती है, जिन सूबों में ज़रूरत नहीं होती वहां गिरफतारी नहीं होती। तो जब सरकार पर यह काम छोड़ा जाना है और सरकार के ही जरिये से यह काम होने वाला है तो मैं समझता हूं कि इस में कुछ और जोड़ने से कोई बहुत फर्क नहीं होगा।

मैं एक यह सुझाव देना चाहता था कि इस कानून को दिसम्बर १९५३ तक ही रखा जाय और इसको सन् १९५४ तक बढाया न जाय। लेकिन १८ जुलाई को इस सदन में मैं ने जो कला देखी उस के बाद मैं ने यह सोचना शुरू किया कि अगर यह कानून हर साल इस भवन में आयेगा तो हर साल यह कला दखनी पड़ेगी। इस लिये यही अच्छा है कि इस को दो वर्ष के लिये बढ़ाया जाय। इसी लिये मैं ने अपना पहला विचार छोड़ दिया। अभी मेरे दोस्त ने अपने हाथ में कोई चोट दिखलाई थी। मैं समझता हूं कि यह सब कला जो हम लोग इस सदन में देख चुके हैं उसी का अवसर अगर और कहीं आया हो तो चोटें आई होंगी। ऐसी बातों को कह कर यह कहना कि यह कानून गलत है या बुरा है मैं समझता हूं कि यह मुनासिब नही होगा।

जहां तक इस कानून के जारी होने का सवाल है आप की रूलिंग के पश्चात मैं यह आवश्यक नहीं समझता कि में उस पर बहुत निवेदन करूं। लेकिन इतना तो मैं निवेदन कर ही देना चाहता हूं कि इस वक्त इस कानून की जितनी आवश्यकता है हमारे माननीय सदस्य जो उस तरफ बैठे हैं वह उस को महसूस नहीं करते। उन में से कुछ तो यही सोचते हैं कि यह हम पर लागू न हो जाय। मैं समझता हूं कि यह विचार उन कों छोड़ देना चाहिये क्यों कि वह इस तरह के लोगों के वास्ते नहीं है, वह किसी पार्टी के लिये नहीं है। वह ऐसे लोगों के लिये है जो अपनी कार्रवाईयां छप कर करते है और संगठित रूप से ऐसा षड्यंत्र करते हैं जो कि सनाज को नुकसान पहुंचाये। अगर वह इतना ही सोचना शुरू कर दें तो मेरी समझ में जितनी बहस है और जितनी बातें हैं वह सारी की सारी जाती रहें। मैं ने अभी यह सुना। अभी एक माननीय सदस्य बोल रहे थे तो मुझे यह लग रहा था कि वह समझते हैं कि अगर यह क़ानून पास हो जाता है तो पहला इन्सान हिन्दुस्तान में मैं होऊंगा जिस पर यह क़ानून लगेगा। तो जो शख्स यह समझता हो वह हर तरह से कोशिश करेगा कि यह क़ानून न बने। लेकिन ऐसी कोई बात नहीं है। यह क़ानून ऐसे लोगों के लिये बना है जो वाक़ई समाज के विध्वंसक हैं।

अब इस पर मैं ज्यादा न कह कर एक दो सुझाव जो आवश्यक हैं वह देना चाहता हूं। एक तो यह कि ऐडवाइज़री बोर्ड के सामने जो मामलात जाते हैं तो क़ानून में ऐसा प्रबन्ध होना चाहिये कि ऐडवाइज़री बोर्ड को सारे के सारे वाक़यात दिये जा सकें। उस के पास सब वाक़यात रहें जिन पर कि वह अपनी राय क़ायम कर सकें और फिर अगर वह ज़रूरत समझे, किसी विषय पर आवश्यक समझे तो शहादत बुला सकें, गवाही ले सकें और खुद ही गवाही लें। यह नहीं कि किसी को मौक़ा दे कि वह जिरह करे और बहस करे, बल्कि खुद पूछताछ कर ले। इतनी तरमीम

तो अवश्य इस में हो जानी चाहिये। जितने वाक़यात उन के पास हों वह सब उस व्यक्ति को भी दिये जायें जो इस से सम्बन्धित है और उससे सारे के सारे का जवाब पूरे तौर पर ले लें ताकि कोई चीज़ बाक़ी न रहे।

आख़िरी चीज़ मैं यह कहना चाहता हूं कि जो ग्राउंड्स दिये जाते हैं उन की पूरी तफ़सील होनी चाहिये, पूरा ब्यौरा होना चाहिये जिस से वह समझ सकें कि उस के ख़िलाफ़ क्या मामला है और क्यों वह पकड़ा गया है। बस इतना ही मुझे निवेदन करना है।

श्री नन्द लाल शर्मा (सीकर) :

धर्मेण शासिते राष्ट्रे न च बाधा प्रवर्तते।
नाधयो व्याधयश्चैव रामे राज्यं प्रशासति ॥

माननीय अध्यक्ष महोदय के सामने विधेयक उपस्थित है "निवारक निरोध" और इसके ऊपर विशिष्ट समिति की ओर से दिये गये निर्णय का भी हम लोग अध्ययन कर चुके हैं। इस सब को देखने के बाद मेरा मन यह कहता है कि मत भेद रखने वाले जितने भी सज्जन हैं उन की भावना का पुनः समर्थन किया गया है। मुझे प्रसन्नता है कि कांग्रेसी सदस्यों में से भी अभी हमारे पूर्व वक्ता महानुभाव ने चलते चलते अपने भाषण में यह कह ही डाला कि अमुक अमुक वस्तु नज़रबन्द की संरक्षा के लिये अवश्य होनी चाहिये। कम से कम उस को अपनी नज़रबन्दी का कारण बतलाने के लिये तो पूर्ण सुविधा दी जाय। हमारा यह कहना है कि इस बात के विरुद्ध चाहे हमारे कम्युनिस्ट भाई कितना ही कहते रहें, चाहे हमारे और कितने ही सज्जन कहते रहें, किसी को गिरफ्तार न करने, अपराधी को दंड न देने से सर्वदा राज्य नष्ट हुआ करते हैं।

अदण्ड्यान्दण्डयन्राजा
दण्डयां श्चैवाप्य दण्डयन।

दंडीय को दंड न देना और अदंडीय को दंड देना यह दोनों ही राज्य के नाश का कारण हैं। जिस राज्य के अन्दर डंडा कमज़ोर रहेगा, जिस राज्य के अन्दर अपराधी के लिये, दोषी के लिये दंड का विधान न होगा, वह राज्य कभी उन्नति नहीं कर सकता, कभी आगे के लिये उस का जीवन निश्चित नहीं रह सकता। हमारा तो यह कहना है कि कम्युनिस्ट क्या अगर कोई भी व्यक्ति राज्य के प्रति कोई अपराध करता है तो उस को भयंकर से भयंकर दंड देना चाहिये। इस में किसी प्रकार का मतभेद नहीं है। मैं यह भी नहीं समझता कि कम्युनिस्ट बन्धु यह चाहते हों कि अपराधी को दंड न दिया जाय। केवल हमारा मतभेद है प्रिवैंटिव डिटेंशन (निवारक निरोध) से जिस शब्द का अर्थ है कि उस पर किसी प्रकार का केस चलाये बिना, उस को किसी कोर्ट के द्वारा, न्यायालय के द्वारा दंडित घोषित होने के पहले ही, उस को दंड में रखा जाय और अपराधी बनाया जाय। आप इस को ध्यान से सुनें (अन्तर्बाधा) रामराज्य की ओर मैं लौट कर आऊंगा।

अध्यक्ष महोदय : आप अध्यक्ष को संबोधन करें और अन्तर्बाधाओं की चिन्ता न करें।

श्री नन्द लाल शर्मा : मैं तो अध्यक्ष को ही संबोधित कर रहा हूं। मेरा यह ख़्याल है कि हम इस सिद्धान्त के विरुद्ध नहीं हैं। वहां से हमारी कांग्रेसी बैंचेज़ की ओर से कहा गया कि यदि हिंसात्मक नीति का परित्याग कम्युनिस्ट कर दें तो हम को इस की कोई आवश्यकता न पड़े। मैं समझता हूं कि यदि केवल इतनी ही बात रह जाती तो सम्भवतः कम्युनिस्ट एक तरफ़ खड़े रह जाते और बाक़ी के विरोधी दल वाले कभी कुछ बोल नहीं सकते। किन्तु यहां और ही बात देखने में आई। हमारे भगवान कैलाश

[श्री नन्द लाल शर्मा]

नाथ साहब का जिस समय त्रिशूल आया तो उन्हों ने एक प्रतिज्ञा की कि कम्युनिस्ट, कम्युनैलिस्ट (सम्प्रदायवादी) और ब्लैक मारकेटियर्स ।

एक माननीय सदस्य : और राजा ।

श्री नन्द लाल शर्मा : राजे महाराजे वे सब केपिटैलिस्ट (पूंजीपति) के अन्दर आ जाते हैं । तो वह उस शूल को त्रिशूल के रूप में यह जो ओलिम्पस के पर्वत से चलने वाला वज्र है ।

एक माननीय सदस्य : कैलाश पर्वत से ।

श्री नन्द लाल शर्मा : भारत में ऐसा विधान नहीं है । भारत में कोई प्रजापति त्रिशूल का प्रहार भारत पर नहीं करता । उस का प्रयोग त्रिपोली में जहां कि देवासुर संग्राम हुआ वहां ऐसीरिया के प्रदेश में असूर्यों में भले ही चलता हो यहां पर वह वस्तु नहीं चलती । इस लिये मेरा विश्वास है कि वह संशोधन स्वीकार होना चाहिये जिस में माननीय चैटरजी महोदय ने कहा कि गृह मंत्री को यह अधिकार होना चाहिये कि वह किसी के विरुद्ध गिरफ्तारी का आर्डर निकाल सके। मैं समझता हूं कि त्रिशूल यदि कैलासपति के हाथ में रह जाय तो वह जानते हैं कि कहां पर दंड देना है और कहां पर प्रजा को अमृत देना है और स्वयं विष खा कर रह जाना है, जिस के कारण कि उनका दूसरा नाम नीलकंठ है । परन्तु हर एक व्यक्ति जो उन के नीचे आये, सब के हाथ में त्रिशूल दे दिया जाय जो निश्चय ही इस बात का अनुभव नहीं कर सकते कि त्रिशूल का उपयोग कैसे किया जाय । कारण क्या है ? सुदर्शन चक्र का चलाने वाला एक ही रहा । हर एक के हाथ में यदि सुदर्शन चक्र दे दिया जाता तो न जाने वह कितने चक्र हो जाते कि फिर आप जानते हैं कि "धर्म चक्र प्रवर्तनाय" की आवश्यकता ही नहीं पड़ती ।

इस लिये मेरा निवेदन यह है कि हम इस बात का विरोध इस सिद्धान्त से नहीं करते कि कम्युनिस्ट या किसी दूसरे को अपराध करने पर भी दंड न दिया जाय । केवल विरोध है इस अंश में कि उस को बिना उस के दोष और अपराध को बताये और बिना उस को अपने दोष की निवृति का अवसर दिये कितने समय तक रखा जा सके । कम से कम जनतन्त्र के नाम से ऐसा नहीं होना चाहिये । हम कांग्रेसी महानुभावों की भावनाओं का आदर करते हैं । यदि कम्युनिस्ट नहीं मैं भी और स्वयं, क्षमा करें, स्पीकर महोदय भी अगर राष्ट्र का विरोध करें तो प्रिवैंटिव डिटेंशन ही क्या वस्तु है, भयंकर से भयंकर दंड देना चाहिये और वह दंड न देने से राज्य नहीं चल सकता । मेरी तो उल्टी यह शिकायत है कि कम्युनिस्ट बन्धुओं को दंड न देने से ही इन की शक्ति आज तक बढ़ी । मुझे याद है, मेरे साथ जेल में थे । अन्डे मिलते थे, केक मिलते थे, मछली मिलती थी, मांस मिलता था, और जर्सी और पैर के लिये बढ़िया से बढ़िया जूते मिलते थे, और अन्त में फिर झगड़ा करते थे । कभी किसी को सन्तुष्ट नहीं पाया, मैं ने पूछा कि ऐसा क्यों करते हो, तो कहते थे कि हमारा तो यह काम ही है कि किसी न किसी तरह से गवर्नमेन्ट को फेल करना । और हमारी यह डिमांड (मांग) है कि हमारे घर वालों को ऐलाउन्स (भत्ता) दो । उस समय मैं ने यह शब्द कहे थे अपने उन बन्धुओं से कि तुम तो जमाई बन कर आये हो, जेल थोड़े ही आये हो । मेरा यह विश्वास है कि अगर जेल के अन्दर उन के साथ इस प्रकार का जमाई सा व्यवहार किया गया चाहे भयंकर से भयंकर अपराध किया हो राष्ट्र की शुत्रता का तो गवर्नमेंट कभी कम्युनिज़म को हटा नहीं सकेगी । यहां कम्युनिज्म शब्द का यह अर्थ नहीं कि केवल

साम्यवाद की भावना रखने वाले को मिटा दिया जाय। हमारे स्वामी रामानन्द तीर्थ महाराज ने कहा कि हमारा सम्यवाद सिद्धान्त से कोई विरोध नहीं है, हमारा तो केवल देश की शत्रुता से, राष्ट्र की शत्रुता से द्वेष है। मुझे इस बात का खेद है कि श्री नम्बिआर का हाथ टूट गया, लेकिन हम समझते हैं कि उन्होंने वहां पर वैसा ही कोई झगड़ा किया होगा जैसे यहां किया। तो यहां तो खैर हाउस था, लेकिन वहां पर जेल था, जेल वालों ने झगड़ा तय कर दिया होगा।

इतनी भावना रखते हुए मेरा आप से निवेदन है, सरकारी बैन्चेज़ से भी और अपने गृह मंत्री महोदय से भी निवेदन है कि इस बात को अच्छी तरह से सोचें। इस त्रिशूल का उपयोग वह अपने पास रखें अथवा अपने प्रतिनिधियों के पास रखें। आप के प्रतिनिधि प्रदेशों के अन्दर रहने वाले जो दूसरे गृह मंत्री हैं वही हो सकते हैं : "आत्मा वैजायते पुत्रः" पुत्र ही अपना प्रतिनिधि हो सकता है, डिस्ट्रिक्ट मैजिस्ट्रेट नहीं हो सकता। होम मिनिस्टर का प्रतिनिधि होम मिनिस्टर ही हो सकता है, और कोई टाम, डिक और हैरी नहीं हो सकता है, हम लोग तो जाति की पवित्रता पर विश्वास रखते हैं इस लिये मेरा यह निवेदन है कि आप इस संशोधन को स्वीकार कीजिये।

मिनट आफ डिसेन्ट (विमति-टिप्पणी) में जो भावना प्रकट की गई है सरकार द्वारा उस के अस्वीकार किये जाने का मुझे खेद है। जब यहां हाउस में विश्वास दिलाया गया था कि वस्तुतः ऐक्ट के अन्दर आने वाली सभी बातों पर संशोधन उपस्थित किये जा सकेंगे उन धाराओं पर म स्वयं तो कुछ कह नहीं सकता क्योंकि सिलक्ट कमेटी में मैं तो था नहीं और मुझे पता नहीं कि वह क्या हुआ किन्तु उस के पढ़ने से पता चलता है कि उन संशोधनों को वहां किसी प्रकार से ग्रहण नहीं किया गया। इस लिये वस्तुतः जिस सिद्धान्त को हाउस में स्वीकार किया गया था उस सिद्धान्त को सिलेक्ट कमेटी में भी स्वीकार करना चाहिये था। और विरोधी दल द्वारा उपस्थित किये जाने वाले सिद्धान्तों के संशोधनों को भी ले लेना चाहिये था। इस में विशेष कर ऐडवाइज़री बोर्ड (मंत्रणा परिषद्) के अध्यक्ष पद के लिये कहा गया था कि हाई कोर्ट का जज होना चाहिये, हाई कोर्ट का कोई जज चाहे भूतपूर्व हो या वर्तमान, और पहले एक और शब्द था अर्थात जो जज बनने की योग्यता रखता हो, जिस का अर्थ है कि दस वर्ष की प्रेक्टिस जिस प्लीडर को हो जाय वह आ कर ऐडवाइज़री बोर्ड में खड़ा हो जाय और किसी आदमी को प्रिवेन्टिव डिटेन्शन में रख दें, चाहे वह जज सरकारी पक्ष में हो चाहे न हो। इस विधेयक की ज़द में कोई पब्लिक का आदमी आ सकता है। हमारे बन्धुओं ने कई बार प्रश्न किया कि राजस्थान में क्या हो रहा है। मैं राजस्थान से आया हूं, राजस्थान की स्थिति का स्पष्टीकरण करना मेरा कर्तव्य है और मैं गृह मंत्री महोदय को यह बतलाना चाहता हूं कि राजस्थान में जितनी बार भी प्रिवेन्टिव डिटेन्शन की बातें की गई हैं इन दिनों के अन्दर मुझे खेद है इस बात का कहते हुए कि उस में से बहुत अधिक पार्टी के दृष्टिकोण ही की गई। और उस पार्टी के दृष्टिकोण का फल यह हुआ कि वहां के हाई कोर्ट में हैबिअस कार्पस करने के बाद वह लगभग सारे के सारे छट गये। यह थोड़े दिनों की रिपोर्ट है जिस के सम्बन्ध में एक शिष्ट मंडल हमारे माननीय गृह मंत्री महोदय से भी मिला था, उस में कम से कम १५ आदमियों को डिटेन (नज़रबन्द) किया गया एक ही ग्राउन्ड (आधार) पर, अर्थात् वहां वहां के वरण को विक्षुब्ध करने की भावना से उन में से एक दो व्यक्तियों के पास पैसा था वह हाई

[श्री नन्द लाल शर्मा]

कोर्ट पहुंच गये, उन्होंने रुपया खर्च करने वालों को तो हैबिअस कार्पस पर छोड़ दिया, लेकिन बाकियों के पास पैसा नहीं था कि हाई कोर्ट में पहुंचें और अपने को छुड़ाने के लिये कोई प्रयत्न कर सकें। इस लिये आप यह समझें अगर किसी भाग्यवान के पास पैसा होगा तो वह हाई कोर्ट तक पहुंच कर हैबिअस कार्पस कर लेगा, लेकिन गरीब आदमी तो पहुंच नहीं सकेगा। उस का ख्याल कौन करेगा? वार टाइम्स (युद्ध समय) के लिये, इमर्जेंसी टाइम्स (संकट समय) के लिये इंग्लैंड आदि प्रदेशों में जो कानून बनाये गये हैं वह साधारण हालतों में भी भारतवर्ष में चलाये जायें यह दुर्भाग्य ही है और इस दुर्भाग्य को हमारे बन्धु फिर भी स्वीकार कर रहे हैं इस का हमे खेद है। मैं कहता हूं कि इसको स्वीकार कर लेने के पहले अच्छा तो यह है कि अगर आप का दंड विधान इंडियन पीनल कोड आप को पर्याप्त रक्षा नहीं देता तो अपने राष्ट्र की रक्षा करने के लिये आप उस दंड विधान का संशोधन करें। दंड विधान को संशोधित कर के जो केसेज़ उस में गवर्न न होते हों उन के लिये इस प्रकार के सेक्शन इस बिल में लावें। यदि आप प्रिवेन्टिव डिटेन्शन के नाम से ही उन को करना चाहते हैं तो कम से कम सभ्यता के नाम पर, जनतंत्र के नाते, अपने विधान की कम से कम मान मर्यादा को कायम रखने के नाते, आप को इतना अवश्य करना चाहिये कि डेटेन्यू (नज़रबन्द) को आप बाकायदा बन्धन में तो पूरा रखें, किन्तु उसको अपने पक्ष की सफाई में कुछ कहने के लिये अपनी ओर से कानून जानने वाले को उपस्थित करने का अवसर दें। वह इस अधिकार से वंचित न हो। जिस समय आप गाया करते थे:

"बंदी इस कारागृह में एक अभिनव ज्योति जगा दे
कड़ियों की झनकारों में विप्लव को तान सुना दे।"

कल तक जो गाया करते थे 'बंदी इस कारागृह में अभिनव ज्योति जगा दे" तो क्या सचमुच आज अभिनव ज्योति जगाने वाले मर गये? सम्भव है देश की रक्षा करने की इच्छा रखने वाले भी हमारे कांग्रेस बेंचों पर बैठने वाले महानुभावों को उन की नीति देश-द्रोह की मालूम होती हो और वह यह समझते हों कि कांग्रेस की नीति के द्वारा देश को हानि पहुंच रही है, चाहे वह कश्मीर के सम्बन्ध में हो चाहे और किसी सम्बन्ध में, अगर वह यह समझते हैं और केवल आप से मतभेद रखने के लिये ही कारण उन को जेल में ठूंस दिया जाय और फिर उन की सुनवाई न हो तो अनारकी (अराजकता) में और क्या होगा। हम लोग नादिरशाही की कहानी सुनते रहे हैं, यह कौन सी शाही होगी इस का पता नहीं।

इस लिये मेरा कहना है कि मैं किसी कठोर बचनों का प्रयोग तो नहीं करना चाहता लेकिन इतना आवश्य कहूंगा कि यह न समझिये कि यह चक्र सफेद पर नहीं चलेगा। यह चक्र लाल पर नहीं काम कर सकता, लाल आप के कब्ज़े के बाहर है, हरा भी आप के कब्ज़े के बाहर है, केवल सफेद ही सफेद रह गया है यह प्रिवेन्टिव डिटेन्शन केवल उसी पर न रहे। अगर कुछ करने की शक्ति है तो मैं फिर कहता हूं कि बाईस हज़ार महिलायें पाकिस्तान में पड़ी पड़ी खून के आंसू बहा रही हैं, उन के लिये कुछ अपनी शक्ति का प्रयोग कीजिये। मुझे इस बात को कहते हुए खेद होता है जब आप कम्युनिस्ट, कम्युनैलिस्ट, ब्लेक मेलर्स और केपिटलिस्ट कहते हों तो उस का क्या अर्थ है? देअर इज़ नो एक्स्क्लूडेड मिडल, कोई बाकी बच नहीं

पाता । जिस को आप पकड़ना चाहेंगे अगर वह धर्म को मानता होगा तो आप उसको कम्युनलिस्ट कह देंगे, अगर धर्म को न मानता होगा तो आप उस को म्यु नस्ट, या सोशलिस्ट कह देंगे । ऐसी परिस्थिति में अगर आप किसी की इस तरह पोलिटिकल ब्लैकमेलिंग (राजनैतिक तर्जना) के द्वारा दुर्दशा करते हैं, तो यह कहां तक उचित और मुनासिब होगा । मेरा निवेदन है कि अगर आप इस तरह की पोलिटिकल ब्लैकमेलिंग से उस व्यक्ति को बचाना चाहते हों तो यह उचित है कि आप उस को ओपिन कोर्ट (खुली अदालत) में पेश करें जहां पर वह जुर्म के खिलाफ अगर वह चाहे तो अपनी सफाई दे सके और अगर उस के बाद उस का जुर्म साबित हो और दंडस्वरूप वह व्यक्ति फांसी के तख्ते पर भी लटका दिया जाता है तो उस के बारे में किसी को तकलीफ नहीं होगी । मैं आप से न्याय के नाते, धर्म के नाते और उस धर्म चक्र के नाते, जिस की आप लोग इतनी दुहाई दिया करते हैं, उस भावना के नाते, जिसके मातहत आप ने यहां पर प्रजातांत्रिक जनतंत्र और लोकतंत्र का शासन स्थापित किया है, इन सब के नाते और उस अभागे भारत को, जिस को खाने को नहीं मिल रहा है, अपील करता हूं कि आप किसी व्यक्ति को दंडित करने के पहले उस को अपनी सफाई पेश करने का अवसर दें, नहीं तो यह जनतंत्र पर स्पष्ट कुठाराघात करना है । मुझे इस सम्बन्ध में एक बात स्मरण आती है : एक गरीब आदमी था जिसको फूड कंट्रोल (खाद्य नियंत्रण) के कारण रोटी खाने को नहीं मिली और वह लाचार होकर भूखा क्या न करता गली में पड़े हुए गन्दे सड़े फल वगैरह उठा कर खाने लगा और जिस के फलस्वरूप उसे हैजा हो गया उस के पास पैसा तो था ही नहीं जो किसी बड़े डाक्टर से मिलता और अब लगा वह ऊपर से भी बहने और नीचे से भी बहने, अब उस को लोग इलाज के लिये ले गये एक कुष्ट वैद्य के पास, उस ने कहा कि भाई इस के ठीक होने का उपाय यह है कि इस रोगी को न तो कै आये और न दस्त, और इस के लिये एक पत्थर इस के नीचे से ठोंक दो और एक पत्थर ऊपर से ताकि दोनों तरफ से बहना बन्द हो जाय क्योंकि उस का इस तरह से प्रीवैन्टिव डिटेंशन हो जायगा और ऐसा करने के बाद न तो उस को कै आयगी और न ही दस्त । लेकिन आप जानते हैं कि इस इलाज का नतीजा क्या हुआ ? उस बेचारे रोगी का पेट ही फट गया । मुझे डर है कि कहीं प्रीवेन्टिव डिटेंशन एक्ट से भी हमारा वही हश्र न हो । राम राज्य की अक्सर दुहाई दी जाती है, आप जानते हैं कि आदर्श पुरुष राम ने किस प्रकार एक धोबी के मुंह से अपनी धर्मपत्नी सीता के लिये कुछ बुरे शब्द सुन कर भी उन्होंने धोबी को कुछ भी नहीं कहा, अगर वह चाहते तो उस को जेल के सींखचों में बन्द कर सकते थे, मगर राम ने धोबी को उस के लिये प्रवेन्टिव डिटेंशन में नहीं डाला राम क्या नहीं कर सकते थे , उस राम ने, जिस ने रावण के सारे कुल का बिना अयोध्या से सेना का एक सिपाही मंगाये नाश कर दिया सप्त लोकैकनाथ कुल दशकण्ठकल द्विषः । उन के लिये कौन सी चीज़ असम्भव थी, वह चाहते तो पता नहीं उस धोबी को साईबेरिया के जंगलों में भेज सकते थे लेकिन उन्होंने चरित्र की पवित्रता का परिचय दिया । सीता के चरित्र की पवित्रता का वह आदर्श उपस्थित किया जो आज सारे विश्व के सामने है और आज उस रामायण काल को साढ़े नौ लाख वर्ष बीत जाने पर भी लोग स्मरण करते हैं और उस से प्रेरणा प्राप्त करते हैं । कहां वह रामराज्य और कहां आज का ज़माना जब हमें समाचारपत्रों से यह विदित होता है कि

[श्री नन्द लाल शर्मा]

रामचन्द्र शर्मा वीर ने गौहत्या बन्द कराने के प्रयत्न में अपने प्राणों की आहुति दे दी, वह आप की हिरासत में बिहार प्रान्त में रह कर मर गया, परन्तु सरकार के कानों पर जूं तक नहीं रेंगी ।

[**उपाध्यक्ष महोदय** अध्यक्ष-पद पर आसीन हुए]

मैं इतना ही चाहता हूं कि आप इस प्रीवेन्टिव डिटेंशन के द्वारा अपने विरोधियों का मुंह बन्द करने का यत्न न करें, यह सर्वथा अनुचित और न्यायसंगत नहीं होगा । मैं यह नहीं कहता कि आप न्यायपूर्वक दंड का विधान न करें, लेकिन जिस को आप दंडित करना चाहें उस को अपनी सफाई उपस्थित करने का अवसर दें और उस के बाद यदि यह सिद्ध हो जाय कि वास्तव में वह अपराधी है तो आप उसे सहर्ष भयंकर से भयंकर दंड दें, उसमें किसी को आपत्ति नहीं हो सकती है । लेकिन अगर आप ऐसा नहीं करते और जिसको आप गिरफ्तार करते हैं उस को सफाई पेश करने का अवसर नहीं देते तो आप का आचरण अमरीका के समान होगा जो हिरोसीमा के असहाय स्त्री पुरुषों के उपर ऐटम बम का प्रयोग करके भी विश्व शान्ति की बातें कर रहा है, लेकिन एक अन्धा भी समझता है कि उस के इस कथनी और करनी में कितना अन्तर है । अन्त में मैं ज्यादा न कहते हुए सिर्फ यह कहूंगा कि आप के सामने जो संशोधन उपस्थित हुए हैं उन में हम न्यायसंगत संशोधनों को स्वीकार करें और बन्दी को दंडित करने के पहले सफाई पेश करने का पूरा अवसर व सुविधा प्रदान करें । यदि आप एसा करना स्वीकार कर लें तो मैं समझता हूं कि आप का यह विरोधी दल भी इसमें समर्थन करेगा और अपने विरोध को उठा लेगा ।

श्री सी० सी० शाह (गोहिलवाड–सोरठ) : विधेयक का विरोध करने वालों को दो श्रेणियों में विभक्त किया जा सकता है : एक तो वे लोग जो यह चाहते हैं कि देश में स्थिति किसी भी प्रकार की क्यों न हो यह कानून लागू नहीं किया जाना चाहिये । दूसरे वे लोग हैं जो कहते हैं कि हम इस कानून का उस समय मानने के लिये तैयार हैं जब हमें यह विश्वास दिला दिया जाये और हमें इस बात के आंकड़े बता दिये जायें कि देश में इस कानून की बहुत ज़रूरत है । प्रथम श्रेणी के लोगों से तर्क करने की मेरी इच्छा नहीं है क्योंकि सदन की बहुसंख्या इस विधेयक सिद्धान्त को मान चुकी है ।

श्री चटर्जी और डा० मुखर्जी पूछते हैं कि इस प्रकार के क़ानून बनाने की क्या आवश्यकता है ? उनका प्रश्न बहुत उचित प्रतीत होता है । परन्तु मैं आपके सामने यह बतलाने का प्रयत्न करूंगा कि क्या वास्तव में यह प्रश्न वस्तुस्थिति को जानने के लिये किया गया है या केवल यह उनकी एक चाल है और वह केवल इस विधेयक का विरोध करना चाहते हैं ।

माननीय गृह मंत्री ने सदन के समक्ष बहुत सी बातें रखीं । उन्होंने डा० मुखर्जी को नज़रबन्दों के बारे में बहुत से आंकड़े भी दिये । इसके अलावा मेरे माननीय मित्र श्री नथवानी ने सौराष्ट्र की स्थिति के बारे में बहुत विस्तृत आंकड़े दिये । परन्तु खेद है कि जो लोग आंकड़े प्राप्त करने के इतने इच्छुक थे, वे इन बातों को सुन कुछ झुंझला से गये । वास्तव में, उन लोगों के पास इसका कोई उत्तर नहीं था । इससे प्रगट होता है कि वे इस विधेयक का विरोध केवल विरोध के लिय कर रहे हैं । श्री नथवानी द्वारा बताये

गये तथ्यों पर श्री चटर्जी ने कहा कि आप तो छोटी छोटी बातों का ज़िक्र कर रहे हैं, उस समय आपकी सरकार क्या कर रही थी; आपका मंत्रिमंडल निकम्मा है आदि आदि। तो इस प्रकार की तर्क वे करने लगे। वास्तव में बात यह थी कि श्री नथवानी ने जो घटनायें बताई हैं उनका उनके पास कोई उत्तर न था।

मेरा सौराष्ट्र के मंत्रिमंडल से काफी सम्बन्ध रहा है। यदि वह इतना निकम्मा होता, तो सौराष्ट्र के लोगों ने उन मंत्रियों को वोट क्यों दिये होते। सौराष्ट्र में ६० में से ५५ स्थान कांग्रेस ने जीते। चुनाव से तीन दिन पहले मुख्य मंत्री श्री ढेबर के क्षेत्र में दस-पन्द्रह मिनट के अन्दर ग्यारह व्यक्तियों की हत्या कर दी गई थी जिससे कि लोग डर जायें और कांग्रेस को वोट न दें। परन्तु लोगों को कांग्रेस में विश्वास था और उन्होंने उसी को वोट दिये। यदि वहां के लोग इस मंत्रिमंडल को निकम्मा समझते तो इतनी भारी संख्या में कांग्रेसी कभी न आते।

अब डा० मुखर्जी के विचारों पर गौर कीजिये। उन्होंने सरकार पर बहुत कुछ आरोप लगाये हैं। वह कहते हैं कि भूपत बम्बई सरकार के अधीन एक पुलिस अधिकारी था और जूनागढ़ पर विजय प्राप्त करते समय उसने कांग्रेस की बड़ी सहायता की थी। उन्होंने यह भी कहा वह एक देशभक्त नागरिक था। मैं नहीं कह सकता कि डा० मुकर्जी को यह सब सूचना कहां से प्राप्त हुई। भूपत पुलिस अधिकारी तो क्या सिपाही भी न था। श्री नथवानी भूपत को जानते हैं। वह तो एक जागीरदार का ड्राइवर था। यह तो उन लोगों की उड़ाई हुई बात है कि भूपत एक देशभक्त था जो उसे सहायता देते हैं और उसे अपने यहां रखते हैं। मुझे खेद है कि डा० मुकर्जी ने इस गलत प्रचार को ठीक समझ कर ऐसी बातें कहीं जो बिल्कुल असत्य हैं।

फिर, उन्होंने सारी घटनाओं का उत्तरदायित्व सौराष्ट्र सरकार पर रखा है। परन्तु क्या वे जानते हैं कि इन सारी घटनाओं के पीछे राजाओं और जागीरदारों का हाथ था? आप समझ सकते हैं कि इन लोगों के विरुद्ध गवाही इकट्ठी करना कितना कठिन है। ये लोग समझते थे और अब भी समझते हैं कि हमें बहुत से विशेषाधिकार प्राप्त हैं, हमें कोई गिरफ्तार नहीं कर सकता। इस लिये उन्होंने अपनी मनमानी की। इन लोगों पर शस्त्र अधिनियम भी लागू नहीं होता। उनके लिये अपने यहां के सारे शस्त्रों की सूची बनाना आवश्यक नहीं। तो आप देखेंगे कि सौराष्ट्र सरकार को कितनी कठिनाई का सामना करना था। इन लोगों का सामना करने के लिये बड़ी सावधानी की आवश्यकता थी।

यह आरोप भी लगाया जाता है कि कांग्रेस ने निवारक निरोध अधिनियम का प्रयोग विरोधी पक्ष को कुचल देने के लिये किया है। मैं कहता हूं कि अगर सौराष्ट्र में ऐसा हुआ होता तो हमारे विरुद्ध इसका बहुत लम्बा चौड़ा प्रचार किया गया जाता और चुनाव में हमें इतनी सफलता नहीं मिल सकती थी। यह आरोप बिल्कुल निराधार है। हां, चुनावों के बाद सरकार ने यह स्पष्ट घोषणा कर दी थी कि जो भी व्यक्ति डाकुओं की सहायता करेगा, उसे सख्त से सख्त सज़ा दी जायेगी। मैं तो कहता हूं कि बजाये सौराष्ट्र सरकार को बुरा-भला कहने के हमें उसकी प्रशंसा करनी चाहिये कि उसने कितनी सफलता से स्थिति को क़ाबू में किया।

मैं आप से कह रहा था कि चुनावों के समय सरकार ने लोगों के विरुद्ध कोई कार्यवाही नहीं की। इनमें से दो व्यक्ति तो

[श्री सी० सी० शाह]

ऐसे थे जो विधान सभा के उम्मीदवार थे; चुनाव के बाद उन के विरुद्ध कार्यवाही की गई। कार्यवाही किये जाने के बाद भी एक राजा ने, जोनिवारक निरोध अधिनियम के अन्तर्गत पकड़ा गया था, उच्चतम न्यायालय में उपस्थित होने के लिये प्रार्थना पत्र दिया। उस राजा को नज़रबन्दी के यह कारण दिये गये थे कि तुम गत १२ महीनों में भूपत को हथियार आदि दे कर सहायता करते रहे हो, तुम अगस्त १९५०, में भूपत से स्वयं मिले थे, तुम भूपत को डाका डालने और लोगों को मारने के बारे में उसकी मदद करते रहे हो, आदि आदि। इन कारणों पर यह आपत्ति उठाई गई कि यह आधार बहुत अस्पष्ट हैं और नज़रबन्द इन आधारों के विरुद्ध सरकार से ठीक प्रकार से अभ्यावेदन नहीं कर सका। यह भी कहा गया कि सौराष्ट्र सरकार ने राजनैतिक वैमनस्य के कारण यह कदम उठाया है। उच्चतम न्यायालय ने अपने फैसले में कहा है कि यह कहना गलत होगा कि इस व्यक्ति के विरुद्ध जो आदेश दिया गया है वह राजनैतिक वैमनस्य के कारण है। उच्चतम न्यायालय ने यह भी कहा कि निरोध के आधार अस्पष्ट नहीं हैं। मैं यह सारी बातें आपको यह दिखाने के लिये बता रहा हूं कि निवारक निरोध अधिनियम ही केवल ऐसा कानून था जिससे सौराष्ट्र सरकार स्थिति को काबू में कर सकी थी। इसी के द्वारा सारे प्रतिक्रियावादी तत्वों को कुचला जाना सम्भव हो सका था।

संशोधनों के बारे में मैं केवल यह कहूंगा कि इस अधिनियम के अन्तर्गत दिये गये अधिकारों के दुरुपयोग को रोकने वाले संशोधनों को तो स्वीकार कर लिया जाये। परन्तु उन संशोधनों को कभी स्वीकार न किया जाये जिनसे इस कानून में कुछ दुर्बलता आती हो। यह जरूर है कि हमें अधिकारियों को अधिकार देते समय पूरी सावधानी रखनी चाहिये। परन्तु हमें उन पर इतना अविश्वास भी नहीं करना चाहिये कि उनकी शक्ति को या उनके अधिकारों को केवल नाममात्र के लिये रहने दें। इस कानून को एक प्रभावहीन और दुर्बल कानून बनाने के बजाय तो मैं इसको बिल्कुल समाप्त कर देना अच्छा समझूंगा। इसमें जो संशोधन किये गये हैं वे नज़रबन्दों को अधिक से अधिक रियायतें देने के उद्देश्य से ही किये गये हैं। हम स्वयं चाहते हैं कि अधिकारों का दुरुपयोग न हो और मामले को शीघ्र से शीघ्र मंत्रणा पर्षद् तक पहुंचाया जाये। परन्तु हमें ऐसा कानून नहीं बनाना चाहिये जिस का न कोई महत्व हो न प्रभाव।

श्री नामधारी (फाजिल्का–सिरसा): मैं ने जब इस ऐक्ट का डिमाक्रेटिक कंट्रीज (प्रजातन्त्रात्मक देशों) के और बाकी मुल्कों के ऐक्टों से मुकाबला किया तो मैं बड़ा हैरान हुआ कि यह कौन से पवित्र हृदय में से आया है। इस का बनाने वाला कोई महात्मा है या साधू है जिसने ऐसा पवित्र ऐक्ट बनाया। अभी थोड़े ही दिन हुए कि हमारे यहां के एक बड़े भारी आदमी सरदार गुरुबख्श सिंह, जो बड़े भारी लीडर पंजाब के कम्युनिस्टों के हैं वह चीन हो कर आये हैं। तो उन्होंने अपना जो कुछ चीन का ऐक्सपीरियेंस (अनुभव) था वह नयी दिल्ली टाउन हाल में अभी करीब दस दिन हुये बताया। तो मैं वह सुनने के लिये चला गया। जब मैं ने उन की सारी बातें सुनीं तो मैं बड़ा प्रसन्न हुआ कि चीन ने इतनी बड़ी तरक्की की। इतने थोड़े से अरसे में उस ने इतना आला से आला काम किया और अपने मुल्क को इतना आगे बढ़ा दिया।

यह उस का बड़ा ही काबिले तारीफ़ काम था। उन्होंने उस के साथ ही एक बड़ी भारी बात और कही और यह बताया कि पांच महीने के अन्दर चीन ने जितना वहां करप्शन (भ्रष्टाचार) था, स्टेट (राज्य) के बरखिलाफ जितने मूवमेंट (आन्दोलन) थे और चोर बाज़ारी वगैरह जितनी चीजें थीं वह सब खत्म कर दीं। तो मैं ने कहा कि भाई वह कौन सा पैनसिलिन या ऐसा इन-जैक्शन उस के पास था कि जिस ने ऐसा काम कर दिया। फिर उन्होंने साथ ही यह भी कहा कि कोई शख्स अगर हमारे से सवाल करना चाहे तो वह कर सकता है। फिर उन्होंने बतलाया कि चीन में कम्युनिस्ट पार्टी के जो बीस साल के पुराने दो मैम्बर थे तो इस करप्शन को दूर करने के वास्ते वहां जो प्रिवैन्टिव डिटैंशन ऐक्ट था वह ऐसा नहीं था कि टैम्पोरैरीली (अस्थायी रूप से) उस को डिटेन (नजरबन्द) करते थे बल्कि उस को गोली से उड़ा कर परमानैन्टली (स्थायी रूप से) प्रिवैन्टिव डिटैन्शन में भेज देते थे। तो उस प्रिवैन्टिव डिटेंशन ऐक्ट के मुताबिक जब दो आदमियों को जो उनकी पार्टी के बहुत पुराने सेवक थे, गोली से मारने का हुक्म हुआ तो उन में से एक जो चीन के डिक्टेटर मात्से तुंग के बहुत बड़े प्रेमी थे, आप मुझे माफ करेंगे अगर जो मैं तलफ्फज़ करता हूं वह ठीक न हो, उन्होंने उन के जो लीडर हैं उन से इंटरव्यू मांगा। तो उन्होंने जब लीडर से इंटरव्यू किया तो उन से कहा कि आप मुझ पर कृपा करें। मैं ने तो बीस साल पार्टी की सेवा की है और मुझ को अभी आप गोली मारते हैं। तो गलती की मुझ को माफी हो जानी चाहिये।

उन्होंने उन को जवाब दिया कि भाई हम तुम को माफी तो जरूर दे देते, लेकिन जहां तुम ने इतनी कुर्बानियां अपनी पार्टी के लिये की हैं, बीस साल तक सेवा की है, अगर एक मर्तबा मौत की कुर्बानी और कर दोगे तो मुल्क में हमारी मिसाल कायम हो जायगी कि हम अपनी पार्टी का भी लिहाज नहीं करते, और करप्शन कम्पलीटली (पूरी तरह) अपरूट (समाप्त) हो जायेगी। उन्होंने यह बात स्वीकार कर ली और गोली का निशाना बने। सरदार गुरुबख्श सिंह साहब ने कहा कि जो चाहे सवाल कर सकता है, मैं स्टेज पर चला गया और कहा कि मैं एक सवाल करना चाहता हूं। मैं चीन को मुबारकबाद देता हूं, जिसने इतनी भारी तरक्कियां कीं। हम लोग खुशकिस्मत हैं कि महात्मा गांधी ने हम को एक ऐसा नेक शख्स बक्शा है जो मैन आफ दी पीस (शान्ति देने वाला व्यक्ति) है, दुनिया में अमन चाहता है। लेकिन हम लोग जब किसी ब्लाक के मेम्बर नहीं हैं, सब के साथ प्रेम करते हैं, हम ने चीन की सीट को प्राप्त करने के वास्ते यू० ऐन० ओ० में लड़ाई की और अपने नेशन (राष्ट्र) की जो सिस्टर श्रीमती विजयलक्ष्मी पंडित हैं, उन को गुड-विल मिशन पर चीन में भेजा, तो मेरी समझ में नहीं आता कि करप्शन को दूर करने के लिये चीन में तो कम्यूनिस्ट पार्टी गोली के सामने जा कर अपने ऊपर झेलती है और हम हिन्दुस्तान में समाज विरोधी लोगों को, पोज़ीशन के माफिक ए, बी, और सी क्लासेज़ में बिठा कर रसगुल्ले खिलाना चाहते हैं तो वह भी खाना नहीं चाहते। मेरी समझ में नहीं आता कि वही कम्युनिस्ट पार्टी चीन में एक काम करती है और हिन्दुस्तान में दूसरा। वह सरदार साहब कहने लगे यह पोलिटिकल बात है तुम बैठ जाओ। मैं ने कहा, यह बात आप ने क्या कही। रावलपिंडी में रायट (दंगा) हुआ सन् १९२६ में तो वहां पर सर जान माइनार्ड मिनिस्टर आये। उन्होंने फौरन ही सारे रायट की इन्क्वायरी की। भगत लक्ष्मी नारायण,

[श्री नामधारी]

एडवोकेट ने उन से पूछा कि जहां फ़ौज और पुलिस मौजूद थी वहां आग भी लगी और क़त्ल भी हुये और जहां फ़ौज व पुलिस मौजूद नहीं थी वहां कुछ नुक़सान नहीं हुआ उन्होंने कहा बैठ जाइये, बैठ जाइये, यह वकीलों की बातें हैं। कहने का मतलब यह है कि यह जो प्रिवैंटिव डिटेंशन ऐक्ट है उस से आप क्यों घबराते हैं। हम तो महात्मा के फ़ालोअर (अनुयायी) हैं, हमारे रहनुमा उन के फ़ालोअर हैं, वह तो दया, धर्म और प्रेम से ही दुनिया को जीतना चाहते हैं। यह प्रोपेगेन्डा करना कि यह देश की जनता के वास्ते है, यह बिल्कुल ग़लत है। यह जनता के वास्ते नहीं है, जनता के वास्ते हमारे पास महात्मा गांधी का प्रेम है, भगवान कृष्ण का प्रेम है, हमारे पास रूहानी ताक़त है, हम तो उन के सेवादार ह, यह जो प्रिवैन्टिव डिटैंशन ऐक्ट है यह तो उन जुर्मों के वास्ते डी० डी० टी० है जो जनता को खाते हैं, और जनता को बर्बाद करते हैं सिर्फ उन्हीं लोगों के लिये है न कि जनता के वास्ते। मैं ने जिस वक्त अपने अपोनेन्ट (विरोधी) को बीस हज़ार से ज्यादा वोटों से हराया तो वह मेरे पास आये और कहने लगे कि सरदार साहब आप तो हमारी पार्लियामेंट के आनरेबुल मेम्बर हो गये, मैं ने कहा, क्या फजूल बातें करते हो, अंगरेज़ों के ज़माने में हम आनरेबुल मेम्बर हो जाते थे, और बड़े आदमी हो जाते थे, लेकिन अब हम क्या बड़े हो गये हैं ? हां बड़े हो गये हैं, बड़े सवट्स और बड़े नौकर हो गये हैं जनता के। तो हमारी जो स्पिरिट है वह तो हमारे महात्मा की बनाई हुई है, हम उन के फ़ालोअर हैं, जिस आदमी के दिमाग़ में अधर्म का ख़याल नहीं है, जो आदमी पाप नहीं करता, उस को धर्मराज के दण्ड का क्या ख़तरा हो सकता है, जो आदमी अपने मन में डरा करता है इस का मतलब यह है कि वह कोई अनलाफुल डिज़ाइन (बुरा उद्देश्य) रखता है वह कोई क्राइम (अपराध) करने का इरादा रखता है, इसीलिये घबराता है। वरना, अगर हम धर्म के रास्ते पर हैं तो हमें क्या ख़तरा है ?

जब यह प्रिवेंटिव डिटैंशन बिल सामने आया तो उस पर जो बहस हुई उसे सुन कर मुझे बड़ा दुःख हुआ। मैं कम्युनिस्टों को भी दिल से प्रेम करता हूं। पहला हथियार गांधी जी का यही रहा है, लेकिन अगर कोई सर्जन आपरेशन करता है तो वह मरीज़ को मारने के लिये नहीं करता है, मैं आख़िरी आदमी हूंगा जो किसी को तक़लीफ में देखना चाहूंगा। मैं तो चाहता हूं कि उन के दिमाग़ में जो क्रिमिनैलिटी (अपराध की भावना) है वह दूर हो बजाय इस के कि वह तक़लीफ में पड़ें। उस दिन श्री गोपालन ने कहा "आई वाज़ ए मेम्बर आफ दि कांग्रेस, आई वाज़ दि प्रेज़िडेण्ट आफ दि केरला कांग्रेस कमेटी" और फिर मुझ को कांग्रेस के राज्य में प्रिवेन्टिव डिटैंशन ऐक्ट में गिरफ्तार किया गया, तो मुझे बड़ा दुःख हुआ इसे सुन कर। जिन को इतनी सर्विसिज़ थीं, जो कांग्रेस के प्रेजिडेण्ट थे उन को इस तरह से दुःख क्यों दिया गया ? मैं भी कांग्रेस में शामिल हूं, कांग्रेस कहीं मुझ को भी न गिरफ्तार कर ले प्रिवेन्टिव डिटेन्शन ऐक्ट में मैं सोचने लगा कि क्या कांग्रेस एक दम अनरिलायबिल (अविश्वसनीय) पार्टी है ? मेरे पास एक और आदमी बैठा था उस ने कहा तुम क्यों परेशान हो रहे हो ? अगर तुम शुद्ध हो, पवित्र हो तो तुम्हें क्यों परेशानी है, तुम्हें क्या परेशान करेंगे, उस ने कहा कि इस बात का प्रश्न आप

श्री गोपालन से ही पूछिये, और उन से कहें कि वह खुद जज बन कर इस बात का फ़ैसला करें, कि अगर उन की दो स्त्रियां हो, एक पतिव्रता और दूसरी रन-अवे वाईफ जो अपने पति के सामने कुकर्म करना शुरू कर दे तो वह उस से खुद क्या सुलूक करेंगे। इस से मैं सन्तुष्ट हो गया मेरे अर्ज करने का मतलब यह है कि यह जो ऐक्ट है यह कोई कम्यूनिस्टों के वास्ते नहीं है। जब सूर्य चढ़ता है तो सारी सृष्टि के लिये चढ़ता है, उसी तरह से क़ानून है तो सब के वास्ते है। चैरिटी बिगिन्स ऐट होम। सरदार शर्दूल सिंह धर्मशाला जेल में क़ैद थे। देवी माता का मेला था वहां से १६ साधू गिरफ्तार कर के जेल में डाल दिये गये सरदार शर्दूल सिंह ने सुपरिन्टेन्डेन्ट से कहा इन साधुओं को क्यों जेल में लाये हो सुपरिन्टेन्डेन्ट ने कहा यह साधु नहीं हैं, यह जेब कतरे हैं। उन्होंने कहा अंग्रेज़ बनने के लिये तो पांच सौ रुपया चाहिये, कोट चाहिये, पैंट चाहिय, उसे ड्रैस सूट, नाइट सूट सभी चाहिये। लेकिन अगर कांग्रेसी बनना है तो उस को दो पैसे की टोपी चाहिये। यह चन्द सफेद टोपी वाले ब्लैक शीप जो कांग्रेस को बदनाम करने के लिये उन झूठे साधुओं की तरह कांग्रेस में दाखिल हो गये हैं यह तो कांग्रेस को बदनाम करते हैं जो खराब आदमी हैं, जो कांग्रेस को बदनाम करते हैं उन के ऊपर यह प्रिवेन्टिव डिटैंशन ऐक्ट लगेगा और उन को भी हमें पर्ज करना है। मेरे एक दोस्त श्री नम्बियार उधर बैठते हैं, वह फरमाने लगे कि प्रिवेन्टिव डिटेन्शन ऐक्ट तो मेरे ऊपर भी लग जाना था लेकिन मेरे ऊपर नहीं लग सका। क्यों जी ? अंडर ग्राउण्ड से सामने आते तो पता लगता ? वह बड़े होशियार हैं। रावलपिंडी में एक कम्युनिस्ट थे जिनका नाम अहमद खां था। वह वकील के मुन्शी थे, सारी की सारी उम्र पाप में गुज़ारी। जब बुड्ढे होने लगे तो सोचा कि मुझे मर तो जाना ही है, कोई ऐसा तरीका होना चाहिये कि मैं नर्क में न जाऊं। क्या किया कि एक वसीयत कर दी अपने बेटे को लिखा कि जब मैं मर जाऊं तो कफन ऐसा देना जिसे कीड़ों ने खा लिया हो उस में सूराख हों उस लड़के ने ऐसा ही किया जब लड़के उन को दफ़न करके चले गये तो फरिश्ते आये, एक लात मारी और दामन उठा दिया, इस पर वह बुड्ढा हैरान हो कर फरिश्तों की तरफ़ देखने लगा और कहने लगा कि आप मेरी कब्र में ग़लती से आ गये हो मैं तो बहुत पुराना मरा हुआ हूं मेरे तो कफ़न तक को कीड़े खा गये हैं। जिस अहमद खां की आप तलाश करते हैं वह ताज़ा मरा हुआ किसी और कब्र में होगा। जो इस तरह की होशियारी करना चाहते हैं उन के लिये यह ऐक्ट है। जो सही रास्ते पर आना नहीं चाहते उन के वास्ते है।

अब मैं एक खास बात कहने जा रहा हूं। आज आप दुनिया में देखिये कि सब से ज्यादा इज्जत हिन्दुस्तान की है, वह हमारा सेकुलर पालिसी (धर्म निर्पेक्ष नीति) का असर है। आप के सामने पाकिस्तान का लड़ाई झगड़ा चल रहा है लेकिन उसके बाद नतीजा क्या हुआ ? आज इन्डोनीसिया आप के साथ है, तुर्किस्तान आप के साथ है, अफ़गानिस्तान आप के साथ है, ईरान आप के साथ है, मिश्र आप के साथ है, मैं कहता हूं कि अगर आज किसी ने दुनिया को रुहानियत की शिक्षा दी है तो कांग्रेस ने। जिस समय डाक्टर ग्राहम आये थे, जो मेमोरैन्डम बारह हिन्दुस्तान के मुसलमानों ने दिया उस का जो असर हुआ वह अगर हम ३३ करोड़ आदमी भी

[श्री नामधारी]

देते तो न होता । और मिडल ईस्ट में मौलाना साहब के भेजने का नतीजा क्या हुआ ? पंजाब दूसरा कोरिया बनते बनते रह गया। यह हमारे मौलाना साहब और पंडित जी के बर्ताव का असर है कि तमाम इसलामी मुलक हमारे दोस्त हो गये है। मैं रावलपिंडी का रहने वाला हूं, वहां से दो सो मील चल कर रिफ़युजी काश्मीर पहुंचे वहां गड़ बड़ मच गई जम्मू मैं गड़बड़ मच गई, राजा साहब तो वहां से चले गये तीन दिन पहले । तीन दिन बाद हिन्दुस्तान की फ़ौज पहुंची। उस अर्से में शेख अब्दुल्ला और उनके वालंटियरों ने जो हिन्दू और सिख वहां पर गये उन सब की जान बचाई । कितनी नेक नियती से उन्होंने महात्मा जी के प्रिंसिपल को फ़ालो किया। और जो हिन्दु और सिख श्रीनगर में घबरा गए थे और जम्मू जाना चाहते थे उनके वास्ते तकरीबन दो सो मुस्लमान टांगे वाले वालंटियर शेख अब्दुल्ला ने तैयार किये जो हिन्दुओं और सिखों को जम्मू छोड़ने गये। उन में से १७० मुसलमान टांगे वाले मारे गये । लेकिन फिर भी शेख अब्दुल्ला और उस की पार्टी ने सेक्लरिज्म नहीं छोड़ा। और महात्मा जी के नक्शे कदम पर चलते रहे। इन पांच सालों में जितना काम किया है हमारे लीडरों ने उस की मिसाल नहीं है। हम चाहते हैं कि किसी को हम में किसी किस्म का शुबहा नहीं होना चाहिये । म हिन्दुस्तान की कम्युनिस्ट पार्टी और जो दर्जनों पार्टियां उठी हुई हैं उन से कहता हूं कि हद से बाहर जो जायगा वह बच नहीं सकता । बड़ी बड़ी हस्तियां दुनियां में हुईं लेकिन वह कायम नहीं रहीं। जयपुर में पब्लिक प्लेटफार्म पर तकरीर करते हुए वह सवाल हुआ कि सीता माता जो एक हाथ से धनुष उठा कर झाड़ दे लेती थीं और रावण से स्वयम्बर में वह धनुष उठाया नहीं गया वह जबर्दस्ती उन को कैसे ले गया ? तो मैं ने गुरु महाराज की कृपा से जवाब दिया था कि एक एलेक्ट्रिक मीटर जो हजारों टनों की मशीनरी को चलाती है, फ़यूज उड़ जाने के बाद अपने आप को भी नहीं चला सकती ।

सीता माता के जगत माता और सत्वन्ती होने में किसी को शक नहीं है लेकिन जैसे ही लक्ष्मण जी ने राम की जो लकीर खींची थी उसे पार किया, यानी पति की आज्ञा का उल्लंघन किया, तो उन का बल जाता रहा इस लिये मेरा कहना कांग्रेस पार्टी से यह है कि We appreciate your hurry and even hurry takes some time. We appreciate your kindness but there should be a limit to the kindness. (हम आपकी जल्दी को समझते हैं परन्तु जल्दी करने में भी कुछ समय लगता है। हम आपकी नर्म दिली की सराहना करते हैं परन्तु इस की भी कोई हद्द होनी चाहिये ।) इसी में कम्यूनिस्टों का भला, दूसरे लोगों का भला और सब का भला है कि कानून को माना जाय । में कम्यूनिस्ट पार्टी से अपील करूंगा कि वह भी हमारे साथ आयें इस मामले में। हमारा हिन्दुस्तान ऋषि भूमि है जो सब दुनिया की सहायता करने वाली है, अगर तैंतीस करोड़ आदमी एक ब्लाक में हो गये तो बड़ा फर्क पड़ जायगा । हम को दोनों ब्लाकों में से किसी तरफ नहीं रहना चाहिये । हमें दुनिया में नेक नियती और इन्सानियत का साथ देते हुए अमन कायम रखने में सहयोग देना चाहिये और आज कल की इंटरनेशनल पोजीशन को इस किस्म की प्रेम और सुलह पैदा करने वाली एजेन्सी की सख्त जरूरत है। में चाहता हूं कि चूंकि आप हिन्दुस्तानी हैं

इसलिये हम और आप बाजू में बाजू डाल कर चलें ।

मैं किसी इज्म (वाद) के खिलाफ नहीं हूं, मैं तो गरीब जनता के लौट (दशा) को बेहतर बनाने के लिये जो भी इज्म आगे आये, उस के साथ हूं, लेकिन मेरे सामने बैठने वाले दोस्त तो गरीबों की आड़ लेकर अपना मतलब सिद्ध करना चाहते हैं, उन की टेकटिक्स (चालों) को मैं खूब समझता हूं और हम उनके धोखे में आने वाले नहीं हैं ।

अंग्रेजों के वक्त में लोग दूसरों के बच्चों का गला कटा कटा कर सर का खिताब लेकर सरदार बनते थे, लेकिन ऐसे भी लोग उस समय थे जो अपना सिर तलवार पर रख कर सरदार बनते थे । आप लोग मुबारक हैं जो लोगों को जायदादें तकसीम करते हैं, लेकिन मैं आप को बतलाऊं हम वह लोग हैं जिन्होंने देश की बेहतरी और आजादी के खातिर हज़ारों लाखों और करोड़ों रुपयों की अपनी जायदादें तकसीम कीं और लोगों की खातिर कमाया और जीवन व्यतीत किया । जो यह लूट करके और खूनखराबा करके जो जायदादें लेने का आप का आदर्श रहा है, हम उस को बुरा समझते हैं और मैं परमात्मा से प्रार्थना करता हूं कि वह आपको भी प्रेम, शान्ति और सच्चाई का मार्ग दिलाये ताकि आप अपने गलत नीति और रास्ते को छोड़ें और सही रास्ता अखित्यार करें । जो आदमी सोया हुआ हो, उस को तो जगाया जा सकता है, लेकिन अगर आप जागते हुए भी सोये रहना पसन्द करते हैं और सही रास्ते पर नहीं चलना चाहते तो फिर आप को जगाना मुश्किल है । बस में इतना ही कह कर अपनी स्पीच खत्म करता हूं और अगर मुझ से कोई गल्ती या सख्त अल्फाज निकल गये हों, तो उस के लिये क्षमा चाहता हूं ।

श्री **एच० एन० मुखर्जी** : आज हमने माननीय गृह-मंत्री का भाषण सुना । मैं समझता हूं कि उन्होंने विमति टिप्पणियों को देखने तक का कष्ट नहीं किया है । उन्हें विश्वास था कि जो कुछ वह करेंगे वह सदन में पारित हो ही जायगा क्योंकि उनका बहुत अधिक बहुमत है ।

कुछ देर हुई, एक माननीय सदस्य ने सौराष्ट्र का ज़िक्र किया । उन्होंने कहा कि सौराष्ट्र में सामन्तशाही को समाप्त करने के लिये इस क़ानून को काम में लाया जा रहा है । परन्तु क्या आपने कभी सोचा कि इस सामन्तशाही में कौन कौन **लोग** आते हैं ? ये लोग वे हैं जो आज सरकार के ख़ास व्यक्ति बने हुये हैं । बड़े बड़े पदों पर ये नियुक्त हैं । यदि सरकार वास्तव में इस कार्य को करना चाहती है तो वह सौराष्ट्र में जनता के आन्दोलन से क्यों डरती है ? वह भूमि की मूल समस्या को हल करने का प्रयत्न क्यों नहीं करती ? भूमि दान यज्ञ जैसे बेकार की बातों में अपना समय और श्रम क्यों नष्ट करती है ?

एक बात और है, यदि यह मान भी लिया जाये कि सौराष्ट्र में स्थिति ऐसी है कि वहां इस क़ानून का लगाया जाना आवश्यक है तो फिर मैं पूछता हूं कि भारत के अन्य भागों में इसे क्यों लागू किया जा रहा है, संयुक्त समिति में ऐसा एक सुझाव रखा गया था परन्तु उसे भी नामंजूर कर दिया गया ।

यदि माननीय मंत्री ने तथा उस ओर के अन्य सदस्यों ने विमति टिप्पणियों को पढ़ा होता, तो इस घृणित क़ानून के कुछ उपबन्धों में अवश्य संशोधन किया गया होता । पंडित हृदय नाथ कुंजरू जैसे सम्मानित सदस्य ने अपनी टिप्पणी में लिखा है कि "समिति ने विधेयक पर अधिनियम की क्रिया

[श्री एच० एन० मुखर्जी]

न्विति के बारे में ठीक ठीक जानकारी के बिना ही विचार किया है ।" समिति के सदस्यों ने सुझाव दिया था कि उन राज्यों के मंत्रणा पर्षदों के कुछ सदस्यों को समिति में शामिल किया जाय जहां इस क़ानून का लागू किया जाना ज़रूरी समझा जाता हो । इससे पता चल जाता कि वास्तव में मंत्रणा पर्षदों में किस प्रकार कार्य होता है । परन्तु इस सुझाव को भी ठुकरा दिया गया क्योंकि सरकार जानती थी कि सदन में उसका पर्याप्त बहुमत है और विरोधी दल कुछ नहीं कर सकता । आप जनता के विचारों को देखिये । सब लोग इस गन्दे क़ानून के विरोध में हैं परन्तु सरकार इस ओर ध्यान नहीं देती ।

जैसा श्री चटर्जी ने कहा, इंगलैंड में युद्ध काल में इस क़ानून को लागू किया गया था और उस समय भी नजरबन्दों को बहुत सी रियायतें थीं परन्तु भारत में बिना किसी रियायत के शान्तिकाल में भी इसे लागू किया जा रहा है । यह क़ानून इतना अस्पष्ट है कि इसे राजनैतिक दलों के विरुद्ध बड़ी आसानी से काम में लाया जा सकेगा । माननीय मंत्री ने बार बार यह कहा कि इसका समाज विरोधी तत्वों को कुचलने के लिये प्रयोग किया जायेगा परन्तु दूसरे ही क्षण उन्होंने कहा कि कम्युनिस्ट ही समाज विरोधी तत्व हैं । फिर उन्होंने हिंसा के बारे में कहना आरम्भ किया । मैं इस विषय पर तो अधिक बोलना नहीं चाहता, केवल यही कहूंगा कि स्वयं सरकार ही उन प्रदेशों में हिंसा और मारकाट के लिये ज़िम्मेदार है जहां के लिये कम्युनिस्टों को उत्तरदायी कहा जाता है । मैं फिर से यह चुनौती देता हूं कि यदि इस बात की एक निष्पक्ष जांच कराई जाये कि हैदराबाद हिंसा और मारकाट के लिये कांग्रेस दल ज़िम्मेदार है या किसान आन्दोलन, तो हम उस जांच के फैसले को मानने के लिये तैयार हैं । इस चुनौती का कोई उत्तर नहीं दिया जाता क्योंकि सरकार में एक निष्पक्ष जांच करवाने का साहस नहीं । वह किसी निष्पक्ष अदालत के सामने नहीं जा सकती क्योंकि फैसला उसके खिलाफ होगा ।

मैं यह निवेदन कर चुका हूं और सदन के अन्य सदस्यों ने भी कहा है कि नज़रबन्द को क़ानूनी सलाह लेने की सुविधा अवश्य होनी चाहिये । गवाह प्रस्तुत करने और जिरह करने का अधिकार भी उसे होना चाहिये । विमति टिप्पणियों में इसकी चर्चा की गई है, परन्तु सरकार ने इन बातों की ओर ओई ध्यान नहीं दिया ।

माननीय गृह मंत्री का भाषण बहुत उत्तेजनात्मक था । उन्होंने कोई ऐसे तथ्य या आंकड़े नहीं बताये जिनसे यह प्रगट होता हो कि देश की स्थिति बहुत गम्भीर है और इस क़ानून को लागू करना बहुत ज़रूरी है । इस हालत में भी जब कि मंत्रणा पर्षद् में नज़रबन्दों के हितों का विशेष ध्यान नहीं रखा जा रहा है, ३० प्रति शत मामलों में उन्होंने यह फसला दिया कि सम्बन्धित नज़रबन्दों को छोड़ दिया जाये । उच्च न्यायालयों को जो मामले गये हैं, उनमें से अधिकतर मामलों में निरोध के आधारों को अनुचित और अवैध माना गया है । तो आप देखते हैं कि किस प्रकार इस अधिनियम का दुरुपयोग होता है ।

माननीय मंत्री से हम यह आशा करते थे कि वह ज़रूरतमन्दों को भत्ता देने की व्यवस्था अवश्य कर देंगे । परन्तु उन्होंने कहा कि हम ने यह क़ानून अपराधों को रोकने के लिये बनाये हैं, अपराधियों के साथ सहानुभूति नहीं की जानी चाहिये । मैं नहीं जानता

कि यह बात सरकार के लिये कहां तक उचित है आख़िर निवारक निरोध अधिनियम के अन्तर्गत आप उन लोगों को पकड़ते हैं जिन पर आपको सन्देह होता है इसमें गलती होने की बहुत सम्भावना है। इसलिये यह ज़रूरी है कि आप उनके परिवारों के भरण-पोषण की व्यवस्था करें। इसके बाद उन्होंने कहा कि गत तीन महीनों में सारे मामलों की पूरी तरह छानबीन की गई है और बहुत कम पुराने नज़रबन्द बाक़ी बचे हैं। इन्हें भी पहली अप्रैल, १९५३ तक छोड़ दिया जायेगा। इससे पहले वह यह कह चुके थे कि अगले दो वर्षों में विश्व की या भारत की स्थिति में कोई विशेष परिवर्तन होने की आशा नहीं है। फिर आप सोचिये कि हम उनकी बात का क्या मतलब निकालें। वह कहते हैं कि हमें स्थिति के सुधरने की आशा है परन्तु इस समय हमारे ऊपर ख़तरे के बादल छाये हुये हैं। मैं पूछना चाहता हूं कि ये ख़तरे क्या हैं? क्यों आप यह असाधारण शक्ति चाहते हैं? इसका हमें कोई उत्तर नहीं दिया जाता। यदि आप सामन्तशाही को ख़त्म करना चाहते हैं जैसा सौराष्ट्र के बारे में कहा जाता है तो स्पष्ट कहिये। हम आपका साथ देने के लिये तैयार हैं।

मुझे आश्चर्य है कि माननीय मंत्री ने जेल में नज़रबन्दों की दशा की प्रशंसा की है। वह कहते हैं कि उन्हें साधारण जनता से अधिक आराम है। यह तो वैसी ही बात हुई जो अंग्रेजों के राज्य में नियुक्त की गई एक समिति ने अण्डमान के बारे में कही थी। उन्होंने वहां का दौरा करके यह कहा था कि अण्डमान तो स्वर्ग है। आज यह सरकार भी उसी तरह की बातें कर रही है।

अन्त में मैं माननीय मंत्री से यह अनुरोध करूंगा कि वह विमति टिप्पणियों को एक बार पढ़ें और उन पर विचार करें कि सदन के विभिन्न सदस्यों का इस कानून के बारे में क्या मत है। इसके बाद वह सदन में आयें और इस निवारक निरोध अधिनियम की अवधि बढ़ाने का प्रस्ताव करें।

डा० एस० एन० सिन्हा (सारन पूर्व): श्रीमान्, मुझे हर्ष है कि यह एक ऐसा विषय है जिस पर मैं वास्तव में अधिकृत रूप से बोल सकता हूं। मैं आज आपके सामने उन लोगों की कार्यवाहियों का जिक्र करूंगा जो हमेशा लुक छिप कर काम करते हैं। मैं जानता हूं कि यह कार्यवाहियां किस प्रकार चलाई जाती हैं। अंग्रेजों के शासनकाल में मैं स्वयं छिप कर रहता था और उस समय के अनुभव से मैं बहुत कुछ आपको बता सकता हूं जब तक आप इन चीज़ों को ठीक तरह से नहीं समझेंगे तब तक आप यह भी नहीं समझ सकते कि इनसे क्या क्या खतरे खड़े हो सकते हैं।

ब्रिटिश काल में मेरी कार्यवाहियां केवल भारत में ही सीमित नहीं थीं। मैं केन्द्रीय यूरोप तथा अन्य देशों में भी घूमने गया था और वहां मैं ने उन देशों की सरकारों से सम्पर्क स्थापित किया था जो भारत के साथ कुछ सहानुभूति रखते थे या जिन्हें भारत के मामलों में कुछ रुचि थी। तो इन छिप कर की जाने वाली कार्यवाहियों की खास बात यह है कि आपको उन देशों की सहायता बड़ी आसानी से मिल सकती है जो आपके खुद के देश के मामलों में कुछ रुचि रखते हैं। अंग्रेज़ों के जमाने में तो इन बातों के लिये हमारे पास कुछ औचित्य था क्योंकि हमें विदेशी राज से छुटकारा पाने के लिये सब तरह की सहायता की आवश्यकता थी। परन्तु आज फिर उन कार्यवाहियों का सहारा लेना देश के साथ शत्रुता करना है। अब हम एक स्वतन्त्र देश में रह रहे हैं और इस लिये इन कार्यवाहियों में भाग लेना हमारे लिये देश के प्रति विश्वासघात करना होग

[डा० एस० एन० सिन्हा]

परन्तु हमें बड़े खद के साथ कहना पड़ता है कि लोग ऐसा कर रहे हैं। पिछले कुछ वर्षों में मैं ने यूरोप के कई देशों का तथा भारत केपड़ौसी देशों का भ्रमण किया है। मैं तिब्बत भी गया था। मैं ने सारी स्थिति का भली भांति परीक्षण किया है और इसके आधार पर मेरी यह सूचना है कि हमारे यहां लुक छिप कर काम करने वाले कुछ विदेशी राज्यों के साथ बहुत गहरा सम्पर्क बनाये हुये हैं और यह विदेशी राज्य वे हैं जो यह चाहते हैं कि हमारे यहां अव्यवस्था और अशान्ति फैल जाये। यह बातें ऐसी नहीं कि जिनके सबूत के लिये मैं आप को कुछ कागजात दिखा सकूं। परन्तु यह हैं बिल्कुल सत्य। अगर आप चाहें तो मैं आपको वहां ले जा सकता हूं और उस कमरे तक पहुंचा सकता हूं जहां बैठ कर ये लोग अपनी सारी योजनायें तैयार करते ह। यह हमारा दूर्भाग्य है कि अन्य देशों की तरह हमारे यहां ऐसी कोई व्यवस्था नहीं जिससे हम इन छिपकर काम करने वालों का पता लगा सकें और इनके षड्यन्त्रों को समाप्त कर सकें।

अन्त में मैं आप को बताऊंगा कि हमारे देश में विदेशी जासूस किस प्रकार काम कर रहे हैं। इन लोगों की नवीनतम बात का मुझे पता लगा है और वह यह है कि इन के एक बड़े नेता को जो देश में बहुत कुछ मार धाड़ और गड़बड़ करवाता रहा है फिर से सारे अधिकार दिये जा रहे हैं। उन का कहना है कि वह भरसक प्रयत्न कर रहा है और उचित अवसर की तलाश में है। अब आप उसके सहायकों को देखिय। इनमें कुछ तो पढ़े लिखे नवयुवक हैं जो हमेशा क्रांति की बातें करते हैं और कुछ करने के बजाय बातें अधिक बनाते हैं। उनसे कोई विशेष डर नहीं है। दूसरे वे हैं जो मिलों और कारखानों में मजदूरों को भड़काते हैं और उनसे हड़ताल करवाते हैं तथा अन्य प्रकार का अन्दोलन करवाते हैं। तीसरी श्रेणी वास्तव में खतरनाक है। ये वे लोग हैं जो अपनी कार्यवाहियों के लिये मास्को से प्रेरणा लेते हैं। हमें इनकी कार्यवाहियों से सदा सतर्क रहना है। इन लोगों के पास हथियार हैं और कुछ ट्रांसमिटर भी हैं मैं आप को यह भी बता दूं कि ये शस्त्र हमारे राज्यों के शत्रागारों से गायब किये हुये हैं। हम इन शस्त्रों से बहुत खतरा है और यह बहुत सम्भव है कि इनसे किसी दिन काम लिया जाये। सब से ताज़ी खबर यह है कि उनके कुछ प्रविधिज्ञ (टैकनीशियन) उत्तर पथ की ओर बढ़ रहे हैं। चीन के एक समाचार पत्र से भी एक समाचार आज मिला है। इसके अनुसार, छिपी कार्यवाही करने का प्रशिक्षण देने वाला एक स्कूल अब कन्टन में भी खुल गया है। अब तक यह स्कूल केवल केन्द्रीय यूरोप में थे। अब साम्यवादियों का जाल दक्षिण-पूर्वी एशिया में भी फल रहा है। कुछ भारतीय जो कैन्टन में गुप्तचर के काम की शिक्षा पा रहे थे अब भारत आ रहे हैं। यह है आज कल हमारे यहां की स्थिति जिससे जनता तंग आ चकी है। लोग इतने क्रुद्ध हैं कि यदि सरकार ने इन्हें नहीं दबाया तो यह स्वयं कानून को अपने हाथ में ले लेंग और इन के टुकड़े टुकड़े कर डालेंगे। कोई भी अपने देश में विदेशी जासूसों का होना सहन नहीं कर सकता। मेरा सरकार से यही अनुरोध है कि वह सदा सावधान रहे। हमारे देश पर खतरे के बादल छाये हुय हैं। इस स्थिति का मुकाबला करने के लिये निवारक निरोध अधिनियम जसे क़ानून का लागू किया जाना बहुत आवश्यक है।

डा० कृष्णस्वामी (कांचीपुरभ्) : मैं उन भाषणों की चर्चा करना नहीं चाहत

जो उस ओर के सदस्यों द्वारा दिये गये हैं क्योंकि उन्होंने विरोधी दल के सदस्यों के दृष्टिकोणों का कोई ध्यान नहीं रखा है और न ही उन्होंने इस कानून की गम्भीरता को ठीक तरह से सोचने का प्रयत्न किया है। परन्तु श्री शिवराव द्वारा कही एक बात का मैं अवश्य उत्तर देना चाहता हूं। उन्होंने अपने भाषण में कहा कि जहां तक कांग्रेस दल का सम्बन्ध है, उसे जनता से इस कानून को पारित करने की आज्ञा मिल जुकी है। परन्तु वास्तव में बात बिल्कुल उल्टी है। कांग्रेस वालों ने वोट मांगते समय जनता से यह कहा था कि हमने नागरिक स्वतन्त्रताओं का क्षेत्र बढ़ाया है और हम इसको आगे और बढ़ाने का ही प्रयत्न करेंगे। जनता के सामने उन्होंने निवारक निरोध कानून के बारे में कुछ नहीं कहा था। यह ठीक है कि इस सदन में उनका बहुमत है परन्तु इस सदन के अतिरिक्त हमारी जिम्मेदारियां जनता के प्रति भी हैं और हमें हमेशा उनके विचारों का ध्यान में रखना होगा। हमें देखना होगा कि क्या यह कानून वास्तव में आवश्यक है, यदि आवश्यक है तो कितने समय के लिये। हमें इन सारी बातों पर विचार करके ही निश्चय करना चाहिये।

प्रधान मंत्री ने जब यह घोषणा की कि प्रवर समिति में मूल अधिनियम पर भी विचार हो सकता है और उसमें आवश्यक संशोधन किये जा सकते हैं तो हमें बहुत आशायें हुई थीं कि शायद हमारी बातों को वहां ध्यान में रखा जायगा। परन्तु ऐसा नहीं हुआ और हमारे सारे के सारे संशोधन अस्वीकृत कर दिये गये। हमारा यह संशोधन भी ठुकरा दिया गया कि इस कानून को केवल एक वर्ष के लिये लागू किया जाये। यदि बाद में भी स्थिति ऐसी ही हो तो सरकार संसद् के समक्ष फिर आये और इसकी अवधि बढ़ान की मांग करे। इंग्लैंड में भी युद्ध काल में जब यह क़ानून प्रचलित था तो वहां की सरकार हर वर्ष इस क़ानून पर बहस करने के लिये चार या पांच दिन नियत कर देती थी। परन्तु हमारे यहां यह भी नहीं किया गया। इसके बाद हमने यह सुझाव दिया कि इस क़ानून को केवल उन क्षेत्रों में ही लागू किया जाये जहां केन्द्रीय सरकार की राय में स्थिति गम्भीर हो। इस सुझाव पर भी सरकार सहमत न हो सकी।

दूसरी बात यह है कि "हानिकारक कार्यवाही" में तो आप सब प्रकार की कार्यवाहियां शामिल कर सकते हैं। यह एक बहुत व्यापक चीज़ है। हमें इसमें केवल एक या दो श्रेणियां रखनी चाहियें। "विदेशों के साथ मित्रतापूर्ण सम्बन्ध" और "शान्ति बनाये रखना" आदि बातें इसके क्षेत्र से बाहर कर देनी चाहियें। किसी देश के साथ मित्रतापूर्ण सम्बन्धों में एक नागरिक द्वारा किये गये किसी "हानिकारक कार्य" के कारण गड़बड़ नहीं हो सकती। शान्ति और व्यवस्था बनाये रखने के बारे में भी यही कहा जाता है कि जब तक सरकार के पास ऐसा कानून नहीं होगा, राज्य की सुरक्षा को भारी खतरा बना रहेगा। परन्तु इसके अन्तर्गत किसी भी नागरिक को बिना किसी उचित प्रमाण के पकड़ा जा सकता है। इन शब्दों में अस्पष्टता है और इसका दुरुपयोग होने की बहुत अधिक संभावना है। किसी भी भाषण को या किसी भी लेख को लेकर, इस उपबन्ध का प्रयोग किया जा सकता है। मेरा कहना तो यह है कि यदि किसी व्यक्ति के भाषण से या लेख से अशान्ति का खतरा है तो इसके लिये हमारे यहां साधारण दण्ड विधान में उपबन्ध हैं; इस निवारक निरोध अधिनियम को बनाने की क्या आवश्यकता है? परन्तु इस विषय पर हमारे संशोधन को मानने से इन्कार कर दिया गया।

(द्वितीय संशोधन) विधेयक

[डा० कृष्णस्वामी]

अब मैं संशोधन विधेयक की कुछ धाराओं के बारे में कहूंगा। धारा ७ में नज़रबन्द को उसकी नज़रबन्दी के आधार दिये जाने के हक़ की चर्चा की गई है। इस के बारे में यह आपत्ति उठाई गई थी कि नज़रबन्द को उसकी नज़रबन्दी के आधार बतलाना ही पर्याप्त नहीं है बल्कि उसे दूसरे मामले से सम्बन्धित सारी सूचना भी दी जानी चाहिये जिससे वह उचित प्रकार से अभ्यावेदन कर सके। परन्तु धारा ७(२) के अनुसार नज़रबन्द करने वाले अधिकारी को यह कहने का अधिकार है कि अमुक सूचना का देना लोक हित में न होगा। इस तर्क को औचित्य मानते हुये भी मैं यह कहना चाहता हूं कि इस उपबन्ध के द्वारा अधिकारी-गण इसका दुरुपयोग ही अधिक करेंगे। मैं समझता हूं कि यह उपबन्ध अनुचित है। आखिर नज़रबन्द को सारे आधार तो बताये जाने चाहियें ताकि वह अपनी सफाई दे सके।

सभापति महोदय: माननीय सदस्य कितना समय और लेंगे ?

डा० कृष्णस्वामी: मैं दस पन्द्रह मिनट और लूंगा।

सभापति महोदय: तो आप अब कल बोलियेगा।

राज्य परिषद् से संदेश

सचिव महोदय: श्रीमान्, मुझे राज्य-परिषद् के सचिव महोदय से प्राप्त निम्नलिखित सन्देश की सूचना देनी है:

"मुझे लोक-सभा को सूचित करना है कि राज्य-परिषद् ने अपनी १ अगस्त, १९५२ की बैठक में निम्नलिखित विधेयकों को, जिन्हें लोक सभा ने अपनी १७, २३, २८ और २९ जुलाई, १९५२ की बैठकों में पारित किया था, बिना किसी संशोधन के स्वीकार कर लिया है:

१. भारतीय पत्तन (संशोधन) विधेयक, १९५२।

२. केन्द्रीय चाय पर्षद् (संशोधन) विधेयक, १९५२।

३. केन्द्रीय रेशम पर्षद् (संशोधन) विधेयक, १९५२।

४. लेख्य-प्रमाणक विधयक, १९५२।"

इसके पश्चात सदन की बैठक शनिवार २ अगस्त, १९५२ के सवा आठ बजे तक के लिये स्थगित हो गई।